‘MAHAJANI MAHATMYA’ AUR ‘AKAAL ME UTSAV’ ME ABHIVYAKT KISAN JIVAN

A dissertation resubmitted during 2019 to the University of Hyderabad in partial fulfillment of the award of a Master of philosophy in Department of Hindi, School of Humanities.

2019

By

RAJENDRA MEENA

17HHHL05

SUPERVISOR

Dr. BHIM SINGH

Department of Hindi, School of Humanities

University of Hyderabad

Hyderabad – 500 046

Telangana

INDIA

‘महाजनी महात्म्य’ और ‘अकाल में उत्सव’ में अभिव्यक्त किसान-जीवन

हैदराबाद विश्वविद्यालय की एम. फिल. (हिंदी) उपाधि हेतु प्रस्तुत

लघु-शोध प्रबंध

2019

प्रस्तुतकर्ता

राजेंद्र मीना

शोध-निर्देशक

डॉ. भीम सिंह

हिंदी विभाग, मानविकी संकाय

हैदराबाद विश्वविद्यालय, हैदराबाद – 500046

तेलंगाना, भारत

D E C L A R A T I O N

I, **RAJENDRA MEENA**, hereby declare that this dissertation, entitled **" 'MAHAJANI MAHATMYA' AUR 'AKAAL ME UTSAV' ME ABHIVYAKT KISAN JIVAN"** ("'महाजनी महात्म्य' और 'अकाल में उत्सव' में अभिव्यक्त किसान-जीवन") submitted by me under the guidance and supervision of **DR. BHIM SINGH** is a bonafide research work which is also free from plagiarism. I also declare that it has not been submitted previously in part or full to this or any other University or Institution for the award of any degree or diploma. I hereby agree that my dissertation can be deposited in Shodhganga /INFLIBNET.

Date: Name: **RAJENDRA MEENA**

Place: (Signature of the Student)

Reg. No. 17HHHL05

CERTIFICATE

This is to certify that the dissertation entitled **"'MAHAJANI MAHATMYA' AUR 'AKAAL ME UTSAV' ME ABHIVYAKT KISAN JIVAN"** ("महाजनी महात्म्य' और 'अकाल में उत्सव' में अभिव्यक्त किसान-जीवन") submitted by **RAJENDRA MEENA** bearing Reg. No.17HHHL05 in partial fulfillment of the requirements for the award of Master of Philosophy in Hindi is a BONAFIDE work carried out by him under my supervision and guidance which is a plagiarism free dissertation as far as I know.

As far as I know the dissertation has not been submitted previously in part or full to this or any other University or Institution for the award of any degree or diploma.

Signature of the Supervisor

Head of the Department

Dean of the School

अनुक्रमणिका

क्रम	पृ.सं.
भूमिका	I-III
प्रथम अध्याय- समकालीन किसान-जीवन का परिदृश्य	**1-21**
1.1 ‘किसान’ शब्द की व्युत्पत्ति एवं कोशगत अर्थ	
1.2 किसान कौन है ?	
1.3 हिन्दी के चयनित उपन्यासों में किसान-जीवन की झलक	
1.3.1 गोदान	
1.3.2 फाँस	
1.3.3 आख़िरी छलांग	
1.4 समकालीन किसान-जीवन के समक्ष चुनौतियाँ	
1.4.1 कृषि-क्षेत्र में निवेश का अभाव	
1.4.2 मानसून पर अत्यधिक निर्भरता	
1.4.3 उदारीकरण की नीतियों का प्रभाव	
1.4.4 ऋण की समस्या	

1.4.5 बीजों पर कंपनियों का नियंत्रण

1.4.6 बाजारवाद के कारण रासायनिक कीटनाशकों का प्रयोग और मृदा-प्रदूषण

द्वितीय अध्याय- 'महाजनी महात्म्य' और 'अकाल में उत्सव' में अभिव्यक्त किसान-जीवन 22-60

2.1 'महाजनी महात्म्य' में अभिव्यक्त किसान-जीवन

2.1.1 भूमि की उर्वरकता में आयी कमी

2.1.1.1 जमीन की प्रकृति

2.1.1.2 परम्परागत बीजों का अभाव

2.1.1.3 खाद, उर्वरकों और कीटनाशकों की कमी

2.1.1.4 प्राकृतिक खादों के अभाव में जमीन का बंजर होना

2.1.2 न्यूनतम समर्थन मूल्य का न होना

2.1.3 ऋण की समस्या

2.1.4 किसानों को लेकर प्रशासन का उदासीन रवैया

2.2 ‘अकाल में उत्सव’ में अभिव्यक्त किसान-जीवन

2.2.1 भूमि की उर्वरकता में आयी कमी

2.2.2 ऋण की समस्या

2.2.3 किसान-संबंधी योजनाओं में भ्रष्टाचार

2.2.4 किसानों को लेकर प्रशासन का उदासीन रवैया

तृतीय अध्याय- विवेच्य उपन्यासों की भाषा-शैली 61-89

3.1 विषय-वस्तु

3.2 भाषा-शैली

3.3 शीर्षकों की सार्थकता

3.4 शब्द-योजना

3.4.1 प्रचलित तत्सम शब्दों के साथ हिन्दुस्तानी का सहजता से प्रयोग

3.4.2 अतिमनोरम, कवित्वपूर्ण, संस्कृत शब्दों का प्रयोग

3.4.3 ठेठ और घरेलू शब्दों का प्रयोग

3.4.4 अंग्रेजी के सहज शब्दों का प्रयोग

3.4.5 सहयोगी शब्दों का प्रयोग

3.5 पात्र और चरित्र-चित्रण

3.6 संवाद-योजना

3.7 देशकाल और वातावरण

3.8 उद्देश्य

उपसंहार **90-92**

सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची **93-95**

परिशिष्ट **96**

1. राष्ट्रीय संगोष्ठी में प्रस्तुत शोधालेख का प्रमाण-पत्र
2. राष्ट्रीय संगोष्ठी में प्रस्तुत शोधालेख

प्रथम-अध्याय

समकालीन किसान-जीवन का परिदृश्य

समकालीन-संदर्भ में किसान-जीवन के समक्ष चुनौतियों को स्पष्ट करने से पूर्व 'किसान' शब्द का आशय, किसान कौन ? इन्हें स्पष्ट करना आवश्यक है। किसान-जीवन के समक्ष कौन-कौन सी नई चुनौतियाँ सामने आ रही हैं। उनकी व्याख्या और विश्लेषण करना इस अध्याय का मूल अभिप्रेत है। किसान-संस्कृति दुनिया की प्राचीनतम मानव-सभ्यता की विकास-यात्रा का अभिन्न अंग है। नई वैश्विकी और नई आर्थिकी के भँवरजाल में इस संस्कृति पर संकट के बादल तीव्र हुए हैं। इस स्थिति से यह उत्पादक वर्ग कैसे जूझ रहा है ? उसका विवेचन करना भी इस अध्याय का हिस्सा बना है। परम्परागत बीजों और खादों के अभाव में किसान की और इस मानवता की मातृभूमि की उर्वरकता में कमी आई है। पशुपालन का क्षेत्र सिकुड़ा है। इसका स्थान मशीन आधारित यांत्रिक-व्यवस्था ने ले लिया है। इस वजह से भी रासायनिक खादों की बिक्री बढ़ी है और जमीन की गुणवत्ता में गिरावट देखी जा रही है। इन सब का विवेचन इस अध्याय के अंतर्गत करने का प्रयास किया गया है।

1.1 'किसान' शब्द की व्युत्पत्ति एवं कोशगत अर्थ:-

सर्वप्रथम हमारे लिए यह जानना होगा कि जिस किसान की बात जोरों-शोरों से हो रही हैं । उस शब्द की व्युत्पति कैसे हुई ? उसकी क्या विशेषता होती है ? शब्दकोशों के अनुसार:-

"हिंदी शब्द सागर के 'द्वितीय भाग' में 'किसान' शब्द को संज्ञावाची पुल्लिंग के रूप में रेखांकित किया गया है। [सं.–कृषाणा, प्रा.–किसान] कृषि या खेती करनेवाला। खेतिहर। २.गाँव में नाई, बारी आदि जिनके हार कमाते हैं। उन्हें किसान कहते हैं।"[1]

एक अन्य अर्थ भी 'किसान' शब्द का इस कोश में दिया गया है जो हैं- "किसान विभूति के सुनि के विचन-आग। ज्वाला। उ [कृशानु-सं] संज्ञा स्त्री-पु. में उर में उठी किसान, उठी सभा मृग सिंह ज्यों बुल्लिव नहीं जुबान।"[2]

'किसान' शब्द का यह जो भिन्न अर्थ कम लोकप्रिय है आज के दौर में वही अर्थ सर्वाधिक प्रसार पा रहा है। किसान की ज्वाला, आग उगल रही है। यह सामाजिक-वर्ग आग के मानिंद खुद जल रहा है। इसकी पीड़ा को कौन समझें ?

खेती या कृषि से निर्वाह करने वाला वर्ग ही किसान है। भारत के परंपरागत मिथकों में राजाओं को भी कृषि या खेती से जोड़कर देखने का लोक और शिष्ट साहित्य में उल्लेख हुआ है। जैसे राजा वीर बलराम को 'हलधर' के रूप में, राजा भोज को डोकरी मालिन द्वारा शिक्षित करने के संदर्भ में।

'मानक हिंदी कोश' के अंतर्गत 'किसान' शब्द के सामने निर्दिष्ट हैं कि "किसान जो खेती बारी का काम करता हो। खेतो को जोतने, उसमें बीज बोने, होने वाली फसल काटने आदि का काम करने वाला व्यक्ति।"[3]

---

[1]श्यामसुन्दरदास बी.ए., हिंदी शब्द सागर-द्वितीय भाग, पृ.सं. 656

[2]वही, पृ.सं. 119

[3]रामचंद्र वर्मा, मानक हिंदी कोश, पृ.सं. 44

इस कोश के अंतर्गत किसान को रहस्यात्मक शरीर की इंद्रियों के रूप में नवीन संदर्भ एवं अर्थ के साथ प्रस्तुत किया गया है। जबकि किसान शब्द का पहला वाला अर्थ 'हिंदी शब्द सागर' का ही विकास है।

उपरोक्त कोशों के आधार पर यह कहा जा सकता हैं कि 'किसान' शब्द ने कृषि-संस्कृति से 'कृषक' से 'किसान' तक की यात्रा तय की है। "किसान शब्द मूल रूप से प्राकृत भाषा का शब्द है। इसका मूल अर्थ कम ही परिवर्तित हुआ है। भक्तिकालीन कविता में इसका इंद्रियों के संदर्भ में व्यवहार हुआ है। जहाँ यह शब्द अपने मूल अर्थ से विचलित होकर रहस्यात्मक संदर्भों से जुड़कर नवीन अर्थ ग्रहण कर पाया। लेकिन ये अर्थ लोकप्रियता नहीं हासिल कर सके ऐसा क्यों ? यह अनसुलझा सवाल है।"[4]

समाजवादी चिंतक राममनोहर लोहिया ने 'किसान' के संबंध में लिखा हैं कि "औद्योगिक मजदूर अब सही माने में सर्वहारा नहीं रह गया, भारत जैसे देश में तो गरीब किसान और भूमिहीन किसान ही सही अर्थों में क्रांतिकारी हो सकते हैं।''[5]

सामाजिक-आर्थिक विश्लेषक सुनील ने 'किसान' के आशय को स्पष्ट करते हुए किशन पटनायक को उद्धृत किया है- "किसान व खेतिहर मजदूर में द्वंद्व तो है, लेकिन यह बुनियादी द्वन्द्व नहीं है। जो किसान आन्दोलन नव-औपनिवेशिक शोषण और आन्तरिक उपनिवेश के वैचारिक परिप्रेक्ष्य में चीजों को देखेगा, वह उससे संघर्ष के लिए खेतिहर मजदूरों को अपने साथ लेने का प्रयास करेगा। यदि किसान और खेतिहर मजदूर एक हो गए, तो बड़ी ताकत पैदा होगी, जो पूँजीवाद, साम्राज्यवाद, ग्लोबीकरण और साम्प्रदायिकता का मुकाबला कर सकेगी।''[6]

---

[4]अपनी माटी, ई-पत्रिका, किसान विशेषांक, अप्रैल-सितम्बर-2017

[5]किशन पटनायक, किसान आन्दोलन : दशा और दिशा, पृ.सं. 13

[6]वही, पृ.सं. 15

अर्थात् किसान के अंतर्गत खेत में काम करने वाला मजदूर भी शामिल है। भूमि के मालिक किसान और भूमिहीन मजदूर के हित भिन्न-भिन्न एवं परस्पर विरोधी हैं या उनमें कोई एकता हो सकती है ? ये कुछ सवाल हैं जो अनुत्तरित हैं। ये सवाल किसान आन्दोलन के सन्दर्भ में बार-बार सामने आते हैं।

1.2 किसान कौन है ?

सर्वप्रथम हमारे लिए यह जानना आवश्यक है कि 'किसान' कौन हैं ? "किसान और कृषक के लिए अंग्रेजी में दो शब्द प्रचलन में हैं- एक 'फार्मर' (FARMER), दूसरा- 'पीजेन्ट' (PEASANT)। क्या ये दोनों शब्द एक ही अर्थ को ध्वनित करते हैं या इनमें कुछ मूलभूत ऐतिहासिक रुप में अंतर भी है ? इन दोनों शब्दों में अंतर है, 'पीजेन्ट' का तात्पर्य है एक ऐसा खेतिहर मजदूर जो गरीब है और सामाजिक श्रेणी में हाशिए पर है जबकि 'फार्मर' का कर्म भी खेती पर ही आधारित है। इसकी अपनी स्वयं की जमीन होती है और यह सामाजिक और आर्थिक आधार पर अपनी सामाजिक स्थिति को निर्धारित करता है।"[7] यूरोपिय समाज में 'सर्फ' (SERF) जिसके लिए हिन्दी में 'कृषिदास' शब्द प्रयुक्त होता है। यह वर्ग भी कृषि-कर्म से जुड़ा हुआ था। इस वर्ग के समानान्तर भारतीय समाज व्यवस्था में 'हाली' (जो पीढ़ी-दर-पीढ़ी कृषकदास ही था, इसके मूल में क़र्ज़ ही मुख्य कारण था) को रखा जा सकता है।

किसान जीवन के समकालीन-परिदृश्य को समझने के लिए हमें फ्लैशबैक का ही सहारा लेना पड़ता है। जब हम सहजानंद व प्रेमचंद के समय के किसानों की स्थिति को उनके आंदोलन को नहीं समझेगें। तब तक हम समकालीन किसान जीवन की चुनौतियों से लड़ने की ताकत नहीं

---

[7]घनश्याम शाह, भारत में सामाजिक आंदोलन, पृ.सं. 66

ग्रहण कर सकते। किसान हमेशा से ही अभावग्रस्त रहा है। समस्या से जूझता रहा है। लेकिन इसके बावजूद भी वह अपने कर्त्तव्य के प्रति ईमानदार रहा है।

चिंतन का विषय है कि सहजानंद सरस्वती और उनके जैसे लोग आखिर क्यों किसानों और मजदूरों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर खड़े थे ? क्योंकि वे जमीनी हकीकत से बेखबर नहीं थे। वे जानते थे कि यदि किसान की स्थिति अच्छी रहेगी तो देश भी प्रगति करेगा। प्रेमचंद भी कुछ इसी तरह सोचते हों। अपनी मृत्यु से 4 वर्ष पहले ही 1932 में उन्होंने लिखा था कि "हमें तो परिस्थिति में कुछ ऐसा परिवर्तन करने की जरुरत हैं कि किसान सुखी और स्वस्थ रहे। जमींदार महाजन और सरकार सबकी आर्थिक समृध्दि किसानों की आर्थिक दशा के अधीन है। अगर उनकी आर्थिक दशा हीन हुई तो दूसरों की भी अच्छी नहीं हो सकती। किसी देश की सुशासन की पहचान साधारण जनता की दशा है। थोड़े से जमींदार और महाजन या राजपदाधिकारीयों की सुदशा से राष्ट्र की सुदशा नहीं समझी जा सकती।"[8] प्रेमचंद कितनी बड़ी बात कह रहे हैं। लेकिन इस बात को देश के नेता आज बहत्तर साल बाद भी नहीं समझ सका है। किसान की दशा आज भी जस-की-तस है, कोई बड़े बदलाव दिखाई नहीं दे रहे हैं और न ही आज किसी प्रकार के किसान आंदोलन की आवाज है। बच्चे जैसा भोला ह्दय रखने वाला किसान को आज भी राजनेता, साहूकार, पटवारी व प्रशासनिक अधिकारी खिलौना देकर बजाते आये हैं। कभी भी दिल से किसानों की समस्याओं को समाप्त करने का संकल्प नहीं लेता है।

"1960-1970 के दशक में हरितक्रांति आयी, जिसमें खेती के क्षेत्र में रोजगार के अवसर बढ़ें। पंचवर्षीय योजनाओं के तहत नई नीति को बढ़ावा मिला। कृषि के उत्पादों में वृद्धि हुई। इसका फायदा कमोवेश हर श्रेणी को प्राप्त हुआ। वर्ष 1969 में इंदिरा गाँधी द्वारा बड़े बैंकों, बीमा कम्पनियों के राष्ट्रीयकरण से गांवों में कर्ज़ आसान शर्तों पर उपलब्ध होने लगा। नाबार्ड ने

---

[8]प्रेमचंद, गोदान, पृ.सं. 33

वाणिज्य बैंकों की सहायता से ग्रामीण बैंकों की देशव्यापी श्रृंखला स्थापित की। मृतप्राय दस्तकारियो को जिंदा किया गया। अनाज, उर्वरक, बिजली आदि सरकारी सब्सिडी तथा जवाहर रोजगार योजना से काम के अवसर पैदा हुए। आवास योजना के अंतर्गत दलितों तथा अन्य कमजोर श्रेणियों को सस्ते मकान उपलब्ध कराए गयें।"[9]

"यह समय किसानों के लिए शुभ संकेत किसान खुशहाली की ओर बढ़े शहरों की ओर किसानों का पलायन रुका। किसान की इच्छाएँ सीमित होती हैं। वह प्रकृति के साथ ताल-मेल बैठाकर चलता है। वह प्रकृति की मार को झेलने के लिए तैयार भी रहता है। मगर कब ? जब वह स्वभाविक विकास से अपनी क्षमता के अनुसार चलता है।"[10] मुनाफ़ा की होड़ में इतना दम लगाकर नहीं दौड़ता है की मर जायें। ये गुण पूंजीपतियों का हैं, जो बड़े किसानों के साथ-साथ छोटे किसानों के अन्दर इस जीन को बायो-टेक्नोलाजी के माध्यम से भर रहे हैं। यही वह कारण है जो उनके जीवन में चुनौती बनकर सामने आ रहा है।

विदर्भ के किसान इसी मुनाफा संस्कृति के शिकार हो आत्महत्या कर रहे हैं। महावीर प्रसाद द्विवेदी को 1908 में ही इस समस्या का भान हो गया था तभी तो वे लिखते हैं कि "जहाँ तक जमीन की उर्वरा या उत्पादक शक्ति की सीमा का अतिक्रमण नहीं होता, वहीं तक अधिक खर्च करने से लाभ हो सकता है आगे नहीं। उत्पादकता की सीमा पर पहुँचाने पर खर्च बढ़ाने से लाभ के बदले उल्टा हानि होती है। अंतत: फल यह होगा की पैदावार बढ़ाने की कोशिश में, अधिक पूंजी लगाने और अधिक मेहनत करने पर भी, आदमी का हिस्सा कम पड़ेगा। धीरे-धीरे यह हिस्सा और कम होता जायेगा यहाँ तक कि दो-चार वर्ष पैदावार की अपेक्षा खर्च बढ़ जायेगा

[9]'हंस पत्रिका', किसान और दुसरे संघर्षशील जन की आर्थिक दशा-दिशा, अगस्त-2006 पृ.सं. 107
[10]'अपनी माटी, ई-पत्रिका, किसान विशेषांक', अप्रैल-सितम्बर-2017

और उन पंद्रह आदमियों का गुजारा मुश्किल से होगा। उन्हें जमीन छोड़कर भागना पड़ेगा।"[11] यही हो रहा है आज के किसानों के साथ। कंपनियों के बहकावे में आकर यह किसान महंगे खाद, महंगे बीज, महंगे कीटनाशक का प्रयोग अंधाधुंध कर रहे हैं, जिससे खेती का खर्च तो बढ़ जाता है परन्तु उत्पादन उतनी मात्र में नहीं हो पाता है जितना लागत है। इसलिए किसान को कर्ज़ा हो जाने से वह आत्महत्या कर रहा है। देखा जाये तो वास्तव में किसान अपनी इच्छा से मरना नहीं चाहता वह तो इन भस्मासुरों का उदर भरतें-भरतें अपने आप को मिटा लेता है और मर भी नहीं पाता है।

1.3 हिन्दी के चयनित उपन्यासों में किसान-जीवन की झलक:-

1.3.1 गोदान

उपन्यासकार प्रेमचंद के द्वारा सन 1936 में रचा गया उपन्यास 'गोदान' हिंदी साहित्य की महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है। 'गोदान' को किसान जीवन की समस्याओं, दुखों और त्रासदी पर लिखा गया महाकाव्य माना जाता है। इस महाकाव्य की कथा में गांव और शहर के आपसी द्वंद्व, भारतीय ग्रामीण जीवन के दुख, गांव के बदलने, टूटने, बिखरने के यथार्थ और जमींदारी के जंजाल से आंतरिक किसान की पीड़ा का मार्मिक चित्रण है। यह उपन्यास होरी के नायकत्व के चारों ओर बुना गया है।

सम्पूर्ण 'गोदान' में किसानों का खून चूसने वाली महाजनी सभ्यता का क्रूर शोषण चक्र दिखाई देता है। इस चक्र में फंसा हुआ होरी और उस जैसे असंख्य गुमनाम किसान साधन विहीन हैं। व्यवस्था के शोषण के शिकार ये किसान अपमान और पीड़ा से भरी जिंदगी को मर-मरकर

[11]महावीर प्रसाद द्विवेदी, सम्पतिशास्त्र, पृ.सं. 108

जीते हैं। प्रेमचंद ने 'गोदान' को संक्रमण की पीड़ा का दस्तावेज बनाया है। इस उपन्यास में होरी ही एकमात्र ऐसा पात्र है जो युग के साथ बदलता नहीं है।

'गोदान' का होरी भारतीय किसान का प्रतिनिधित्व करता है। होरी उन तमाम गरीब किसानों की विशेषताएँ लिए हुए हैं, जो जमींदारों और महाजनों की धीमे-धीमे बिना रुके हुए चलने वाली चक्की में पिसा करते हैं। "डॉ रामविलास शर्मा इस संदर्भ में कहते हैं कि 'गोदान' की गति धीमी है, होरी के जीवन की गति की तरह। यहां सैलाब का वेग नहीं है, लहरों के थपेड़े नहीं है। यहां ऊपर से शांत दिखने वाली नदी भंवरे ही जो भीतर ही भीतर मनुष्य को डुबोकर तलहटी से लगा देती हैं। और दूसरों को वह तभी दिखाई देता है जब उनकी लाश उतराती हुई बहने लगें।"[12]

'गोदान' के होरी का जीवन इतना दयनीय है कि वह चाहकर भी कुछ नहीं कर सकता। उसकी अनुकूल परिस्थितियां भी प्रतिकूल हो गई है वह धनिया से कहता है- "जब दूसरे के पांव-तले अपनी गर्दन दबी हुई है, तो उन पांवों को सहलाने से ही कुशल है।"[13]

प्रेमचंद के उपन्यास युगों-युगों तक किसानों की महागाथा कहते रहेंगे और किसानों को समाज के उत्पादक वर्ग के रूप में पहचान कर देश की उन्नति का मार्ग प्रशस्त करेंगे और समाज व साहित्य में किसानों की भूमिका को भी रेखांकित करेंगे।

1.3.2 फाँस-

प्रसिद्ध कथाकार संजीव का उपन्यास फाँस किसानों की समस्याओं पर केंद्रित है। इस उपन्यास को संजीव ने इस देश के किसानों को समर्पित किया है। इस उपन्यास के समर्पण में

---

[12]डॉ. रामविलास शर्मा, प्रेमचंद और उसका युग, पृ.सं. 97
[13]प्रेमचंद, गोदान, पृ.सं. 5

संजीव लिखते हैं कि "सबका पेट भरने और तन ढकने वाले देश के लाखों किसानों और उनके परिवारों को जिनकी 'हत्या' या 'आत्महत्या' को हम रोक नहीं पा रहे।"[14]

पिछले दो-तीन दशकों में विकराल रूप से बढ़ती किसानों की आत्महत्याएँ ही इस उपन्यास की पृष्ठभूमि रही है। राष्ट्रीय रिकॉर्ड ब्यूरो (एन.सी.आर.बी. नेशनल क्राइम रिकॉर्ड ब्यूरो) के ताजा आंकड़ों के अनुसार 2014 के मुकाबले वर्ष 2015 में किसान आत्महत्या में 2% की बढ़ोतरी हुई है। और यह बढ़ोतरी बढ़कर 42% हो गई है देखा जाए तो वर्ष 2014 की तुलना में 2015 में ज्यादा किसानों और खेती से जुड़े मजदूरों के आत्महत्या के ऐसे मामले सामने आये हैं। और लगभग अस्सी लाख किसानी छोड़ भी दी। "यह उपन्यास किसान की इसी जमीनी हकीकत को हमारे सामने पेश करता है। संजीव के इस उपन्यास में किसानों में भी विदर्भ के किसानों के क्षेत्र की समस्याओं को प्रमुख रूप से उठाया गया है।

विदर्भ के बारे में सबका मानना हैं कि "विदर्भ कृषि का ज्वालामुखी है। सुप्त ज्वालामुखी। क़र्ज़ उतारना तो दूर, किसानों की आमदनी ही इतनी कम है कि खेती में बने रहना मुमकिन नहीं।"[15]

'फाँस' किसान जीवन से संबंधित प्रेमचंद के 'गोदान' के बाद हिंदी का दूसरा सबसे महत्त्वपूर्ण उपन्यास है। इस उपन्यास के विषय में प्रसिद्ध आलोचक मैनेजर पांडे लिखते हैं कि "भारत में अब तक तीन लाख से अधिक संख्या में किसानों ने आत्महत्या की है। यह मानवता के इतिहास की एक भयावह त्रासदी है और अमानवीय समाज-व्यवस्था का भीषण अपराध भी। इस त्रासदी और अपराध के प्रतिरोध की प्रवृत्ति पैदा करनेवाला यह उपन्यास 'फाँस' प्रेमचंद के

---

[14]संजीव, फाँस, पृ.सं. 5, (उपन्यास के समर्पण से)

[15]संजीव, फाँस, पृ.सं. 66

कथा-साहित्य की प्रगतिशील परंपरा का आज की स्थिति में विकास करेगा। "[16](उपन्यास के फ्लैप से साभार)

यह उपन्यास सरकार की नीतियों और उसके विकास के नाम पर पेश किए जा रहे अविवेकपूर्ण मॉडल की कलई खोलता है। "फाँस किसी एक किसान, किसी एक खेतिहर परिवार, किसी एक गांव या फिर किसी एक प्रांत की खेती और किसानी की समस्याओं की कथावर नहीं है, बल्कि उस घाव के नासूर बनने की कथा है। जिसमें कई दशकों से, कहें की आजादी से बहुत पहले धर्म , अंधविश्वास, जटिलता, शोषण व सामंती सामाजिक ढांचे के कीड़े बिलबीला रहे हैं और उनमें राजनैतिक उपेक्षा और भ्रष्टाचार का संक्रमण भी बुरी तरह से फैल गया है। ये खेती के कैंसर जैसे असाध्य रोग से पीड़ित हो जाने की कथा है।"[17]

1.3.3 आखिरी छलांग:-

शिवमूर्ति का उपन्यास 'आख़िरी छलांग' किसान जीवन पर केंद्रित उपन्यास है। जो प्रेमचंद की परंपरा की एक कड़ी दिखती है। 'आखिरी छलांग' उपन्यास का कथानक परस्पर उलझी हुई किसान जीवन की अनेक समस्याओं का जंजाल है। इस उपन्यास के कथानक का आधार पूर्वी उत्तरप्रदेश का ग्रामांचल है। इस का नायक पहलवान एक किसान है। उनके सामने बहुत सी तकनीकी और नीतियों के चलते अनेक समस्याएं हैं। वह अपनी बेटी सायना के लिए दो साल से वर खोज रहा है। बेटे की इंजीनियरिंग की फीस का जुगाड़ नहीं हो रहा है। तीन साल से गन्ने का बकाया नहीं मिल रहा है। सोसायटी से खाद के लिए लिया गया कर्ज़ चुकता नहीं हुआ है। ऐसी कई समस्याओं को पहलवान किसान के माध्यम से शिवमूर्ति ने अपने उपन्यास में

[16]संजीव, फाँस, उपन्यास के फ्लैप से साभार

[17]अपनी माटी, ई-पत्रिका, किसान विशेषांक, अप्रैल-सितम्बर-2017

उठाया है। शिवमूर्ति ग्रामीण रचनाकार है। उन्होंने किसान की समस्याओं को समझा तथा उनकी समस्याओं को महसूस किया है। किसानों की समस्याओं को अभिव्यक्त करते हुए शिवमूर्ति ने इतिहास और वर्तमान को सामने रखा है। 'आखिरी छलांग' उपन्यास मुख्य रूप से किसान जीवन की जिंदगी के प्रति सजग करता है। इसमें किसान जीवन से जुड़े सांस्कृतिक और धार्मिक संदर्भ भी मिलते हैं। यह उपन्यास किसान जीवन की समस्याओं को व्यापकता के साथ प्रस्तुत करता है। यह उपन्यास केवल अवध पर ही नहीं बल्कि समूचे भारत में चेतना लाना चाहता है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि समकालीन किसानी जीवन पर आधारित उपन्यास किसान की आत्महत्या का जो रूप दिखाई पड़ता है। वह वास्तव में एक नमूना मात्र है। असल जिंदगी किसानों की स्थिति इससे भी बदतर दिखाई पड़ती है। लेकिन उपन्यास में उन के जीवन की थोड़ी सी झलक दिखाई पड़ जाती है। जो हमारी संवेदना को झझकोर कर किसान जीवन पर सोचने को मजबूर करती हैं। किसान आत्महत्याओं को उकसानें वाली पृष्ठभूमि को सामने लाने का महत्त्वपूर्ण काम ये उपन्यास करते हैं। उपन्यास के माध्यम से खेती की समस्या, दहेज, कर्ज़, सरकारी नीतियाँ, महंगाई, शोषण आदि किसान जीवन से जुड़ी समस्याओं का चित्रण हुआ है। किसानों को आत्महत्या की ओर ले जाने वाली स्थितियों के विरोध में लड़ने के लिए सामाजिक संगठन एवं एकजुटता पर बल देते हैं। कुल मिलाकर भारतीय किसानों की आज की दशा और आत्महत्या के संदर्भ इन उपन्यासों में चित्रित हुए हैं। किसानों की दुर्दशा के लिए जिम्मेदार तत्व और किसान आत्महत्याओं की जमीनी सच्चाई नई सदी के इन उपन्यासों में यथार्थ रूप से प्रकट हुई है।

1.4 समकालीन किसान-जीवन के समक्ष चुनौतियाँ:-

कृषि भारतीय जीवन का आधार, रोजगार का प्रमुख स्रोत तथा विदेशी मुद्रा अर्जन का प्रमुख माध्यम है। लेकिन आज भारतीय कृषि और किसानों के समक्ष बहुत सी चुनौतियाँ हैं। पहले की तुलना में अब इस क्षेत्र की और अधिक रफ्तार से विकास करने की जरूरत है। ताकि प्रतिव्यक्ति अपेक्षा कृत अधिक खपत अधिक समायोजित किया जा सकें।

खेती-किसानी इस देश की प्राण, संस्कृति और सरोकार रही है। स्वतंत्रता के बाद प्रत्येक वर्ग में तेजी से विस्तार हुआ। लेकिन किसानों की स्थिति बद से बदतर होती जा रही है। खाद-बीज, कीटनाशकों पर निर्भरता और तकनीकी एकाधिकार के फाँस में किसानों को गुलाम बनाने का कुचक्र जारी है। बीज पर सरकारों का एकाधिकार हो चुका है। अब किसान, फसलों से बीज तैयार नहीं कर सकते। सरकारों द्वारा तैयार बीजों के लिए अत्यधिक कीटनाशक, पानी और रासायनिक खाद चाहिए। ऐसे में हमारे किसान (अन्नदाता) दूसरों की मर्जी पर खेती किसानी को विवश है।

1.4.1 कृषि-क्षेत्र में निवेश का अभाव:-

भारत को स्वतंत्रता मिले सात दशक से अधिक हो गया लेकिन लगातार कृषि में नए निवेश में कमी हुई है। चौथी पंचवर्षीय योजना से लेकर बारहवीं पंचवर्षीय योजना तक खेती में निवेश सकल घरेलू उत्पादन यानी राष्ट्रीय आय का मात्र 1.3 फ़ीसदी या उससे भी कम रहा है। अर्थव्यवस्था के घटक के तौर पर देखें तो भारत में 62 प्रतिशत लोग खेती पर ही अपनी आजीविका यापन करते हैं। खेती देश की कुल आय में 13.7 फ़ीसदी का योगदान देता है, और कुल निर्यात में इसकी हिस्सेदारी 12 फ़ीसदी है। लेकिन सरकारें आज भी किसानों को अहमियत नहीं देती अपने बड़े-बड़े वादे तो करती हैं लेकिन अपने उन वादों को केवल जुमला ही बना के रख देती है। सरकार को किसानों के लिए सिंचाई में सार्वजनिक निवेश करना आवश्यक है।

सूखा अब सबसे बड़ी समस्या और चिंता का प्रमुख कारण बन चुका है। सरकारों को किसानों के लिए मौजूदा सूखे का सामना करने के लिए उन्हें सक्षम बनाना चाहिए इस स्थिति का दीर्घकालीन हल निकालने की आवश्यकता है।

1.4.2 मानसून पर अत्यधिक निर्भरता:-

भारत में करीब पांच लाख गांव है। इनमें देश की 68 फ़ीसदी आबादी रहती है। ग्रामीण भारत में करीब 67 फ़ीसदी किसान मजदूर है। किसानों की सबसे बड़ी समस्या मानसून की होती है। भारत जैसे देश में मानसून में लगातार परिवर्तन होता रहता है कभी बारिश नहीं होती तो, कई बार ज्यादा बारिश के कारण फसल चौपट हो जाती है। इस प्रकार किसानों को इन समस्याओं से जूझना पड़ता है। अगर बारिश का 96 फ़ीसदी से नीचे रहता है तो उसे सामान्य से कम माना जाता है। मौसम विभाग के 88 फ़ीसदी के ताजा पूर्वानुमान से पैदा हुई सूखे की आशंका ने सिर्फ किसानों की सिहरन बढ़ा देती है। बल्कि छोटे-मोटे उद्योग जगत भी सहमा हुआ है।

सूखे की और किसानों के जीवन में बहुत ही बड़ी आपदा है सूखे क्षेत्र में रहने वाले किसानों को खेती से ही वंचित रहना पड़ता है। कम बारिश किसानों के साथ-साथ अर्थव्यवस्था की भी कमर तोड़ देती है। पिछले कई वर्षों में कमजोर बारिश का असर खाद्यान्न उत्पादन पर देखा गया था। तापमान वृद्धि एवं वाष्पीकरण की दर तीव्र होने के कारण सूखाग्रस्त क्षेत्र बढ़ता जा रहा है। मिट्टी की जल ग्रहण क्षमता का कम होना भी सूखा का एक प्रमुख कारण है। ऐसे में बेचारे किसानों को आत्महत्या करने के अलावा कोई दूसरा रास्ता नजर नहीं आता है।

जलवायु परिवर्तन से मिट्टी पर दुष्प्रभाव पड़ रहा है। कृषि के अन्य घटकों की तरह मिट्टी भी जलवायु परिवर्तन से प्रभावित हो रही है। रासायनिक खादों के प्रयोग से मिट्टी पहले ही

जैविक कार्बन रहित हो रही थी अब तापमान बढ़नें से मिट्टी की नमी और कार्य क्षमता प्रभावित होगी । ऐसी स्थिति में किसानों के जीवन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है । खेती योग्य जमीन की गुणवत्ता का गिरना तथा विकास एवं शहरी करण के नाम पर सिकुड़ना जारी है । खेती योग्य जमीनें, बाग-बगीचे, तालाब कंक्रीट में तब्दील होते जा रहे हैं । भूमि अधिग्रहण कानून 2013 के तहत सार्वजनिक हित में कृषि योग्य जमीनें बहुत कम दाम पर जमीनों का अधिग्रहण किया गया था। और ये स्थिति अभी भी जारी है ।

1.4.3 उदारीकरण की नीतियों का प्रभाव:-

उदारीकरण की नीतियाँ किसानों को घेरने और उन्हें कॉरपोरेट दास बनाने का कुचक्र रच रही हैं । बाहरी दबावों और कॉरपोरेट हितों के लिए खेती, किसानी को तबाह करने का प्रयास किया जा रहा है । बहाना नगदी फसल उगाने का दबाव है । अतीत में नील की खेती के लिए बाध्य किया जा रहा था । खाद-बीज और कीटनाशकों के दाम लगातार बढ़ाये जा रहे हैं । ऊपर से विश्व व्यापार के जरिये अमेरिका और यूरोपीय देशों की कोशिश है कि उन्हें अयातित खाद्यान्न पर निर्भर कर महाप्रभुओं के खाद्यान्नों को खपाया जाए ।

अपने देश में पंजाब, फर्रुखाबाद और कन्नौज में आलू की ज्यादा पैदावार होती है तो शीत गृहों एवं बिजली की कमी के चलते उसे सड़कों पर फेंकना पड़ता है । सुल्तानपुर और प्रतापगढ़ में आंवले और विदर्भ में कपास का निर्यात रोक कर कौड़ियों के भाव बिचौलियों को दे दिया जाता है । टमाटर की अत्यधिक पैदावार को पशुओं को खिलाया जाता है । ऐसे में किसानों को श्रम के बदले कुछ भी हासिल नहीं हो पाता है । उर्वरक कारखानों का बंद किया जाना और गैर-खाद्यान्न फसलों के उत्पादन को बढ़ाना इसी सोच की कड़ी है । पत्रकार पी.साईनाथ के

अनुसार- सन 1995- 2015 के बीच तीन लाख से ज्यादा किसानों ने आत्महत्याएं की। इसी दौरान मध्यप्रदेश में 28 हजार किसानों ने आत्महत्याएं की और आत्महत्या करने वाले प्रति पाँच किसानों में एक महिला होने का देशव्यापी रिकॉर्ड मध्यप्रदेश के खाते में दर्ज है।

किसानों की देशी तकनीकी, जो पर्यावरण हितैषी रही है। उससे किसानों को काटा जा रहा है और आयातित तकनीकी पर निर्भर बनाया जा रहा है। देश के कुल रोजगार का 75 प्रतिशत हिस्सा कृषि और उस पर आधारित क्षेत्रों पर निर्भर करता रहा है। तमाम औद्योगिक विकास के दावे के बावजूद अभी भी कुल राष्ट्रीय आय का चौथाई हिस्सा इन्हीं क्षेत्रों से प्राप्त होता है। ऐसे में कृषि-उपेक्षा, किसानों को आत्महत्या हेतु मजबूर कर रही है। अजीब विडंबना है कि विश्व व्यापार संगठन के दबाव में जब हम कृषि क्षेत्र की कृषि आर्थिक सहायता (सब्सिडी) घटाते जा रहे हैं। तथा अमेरिका, चीन और यूरोप जैसे देश सब्सिडी बढ़ा रहे हैं। वे अपने यहाँ कृषि को संरक्षण प्रदान कर रहे हैं। और विकासशील मुल्कों पर दबाव डाल रहे हैं कि उनके कृषि उत्पादों को अपने बाजारों में खपाएं।

किसान, मानव-सभ्यता के साथ तब से जुड़ा है जब खेतिहर का आगमन पूंजीवादी उत्पादन बाजार में उत्पाद बेचकर मुनाफा कमाने की प्रवृत्ति के हावी होने के साथ हुआ। साधारणतः किसान का अपनी जोत पर अधिकार होता है और वह अपने परिवार के सदस्यों या रिश्तेदारों के श्रम के आधार पर कृषि कार्य संपन्न करता है। उसके उत्पादन का उद्देश्य अपने परिवार की उपभोग संबंधी आवश्यकताओं को पूरा कर सकें। लेकिन 19 वीं सदी के अंतिम दशकों में पैसे वाले ने कृषि भूमि खरीदकर भाड़े के मजदूरों के आधार पर बाजार के लिए उत्पादन करना शुरू कर दिया। आर्थिक उदारीकरण के बाद या तो कहें कि 90 के दशक के बाद से ही किसानों की आत्महत्या की दरें बढ़ती जा रही है। बाजार में कृषि उत्पादों की दलाली करने वाले

मालामाल हैं, जबकि किसान खाली है। यह सामाजिक दस्तावेज एक चेतावनी है। जिससे पता चलता हैं कि यदि हालात न बदले तो ऐसा समय भी आएगा जब दुनिया का हर आदमी उपभोक्ता होगा वह अपने मन पसंद उत्पाद को खरीदने की कोई भी कीमत देने को तैयार होगा, लेकिन पैदा करने वाला (उपजाने) वाला कोई न होगा।

1.4.4 ऋण की समस्या:-

देश में अनाज उपलब्ध कराने वाला किसान आज कर्ज़ के बोझ में दबता जा रहा है। ग्रामीण क्षेत्र में आज भी ऐसे तमाम किसान हैं जो आत्मनिर्भर नहीं हो सकें। कोई बैंक का कर्ज़दार है, तो कोई महाजन के कर्ज़ में दबा है। खेती-बाड़ी में महंगाई का जो रूप है उससे किसानों का कर्ज़ में दबना लाजमी है।

आज के समय में ज्यादातर किसान ऐसे मिल जाएंगे जो कर्ज़ लेकर ही खेती-बाड़ी कर रहे हैं। बहुत से तो ऐसे हैं जिन्होंने पूर्व में बैंकों से कर्ज़ लिया बाद में खेती दगा दे गई। उत्पादन कम हुआ जिसे बेच कर भी कर्ज़ नहीं चुका सकते हैं। वर्तमान में तमाम किसान ऐसे भी हैं, मिल जाएंगे जिनकी तमाम कोशिशों के बाद भी उन्हें बैंक से कर्ज़ नहीं मिलता तो उनके विकल्प बचता है, वह है महाजन। किसान सीधे महाजनों की शरण में जा रहे हैं। किसानों की कमजोरी का फायदा उठाने से वे नहीं चूक रहे। किसानों को मनमानी ब्याज दर पर कर्ज़ा दिया जाता है जब फसल तैयार होती है तो किसानों के पास पेट भरने तक के दाने नहीं बचतें। पूरी फसल महाजनों के कर्ज़ चुकाने में ही चली जाती है।

किसानों को कर्ज़ देने वालों की कमी नहीं है। क्योंकि बहुत सारी सरकारी, सहकारी व गैर-सरकारी एजेंसियाँ काम कर रही हैं। इसके अलावा किसान क्रेडिट कार्ड की स्कीम चल रही

हैं लेकिन इन सब में गड़बड़ी खूब होती है। दरअसल 60 करोड़ किसान सूदखोरों के लिए बहुत मोटी कमाई का जरिया है, ज्यादातर किसान कम-पढ़े-लिखे हैं। उनमें जागरूकता नहीं है। लिहाजा ज्यादातर छोटे व गरीब किसान आज भी सेठ साहूकारों व महाजनों से मोटे ब्याज पर कर्ज़ लेने को मजबूर होते हैं। कर्ज़ के जाल में फँसकर वे उस से फिर उभर नहीं पातें। हालांकि किसानों को राहत पहुंचाने के नाम पर अक्सर कर्ज़ माफी व उनकी आमदनी दोगुनी कर देने का ऐलान किया जाता है लेकिन यह सिर्फ 'फटकारे' व 'जुमले' साबित हुए हैं अगर कर्ज़माफी करने से ही किसानों के मसले सुलझ जाते, तो देश के आजाद होने के 72 साल बाद, आज सारे किसान अमीर व खुशहाल होते !

1.4.5 बीजों पर कंपनियों का नियंत्रण:-

पहले किसान खुद का बीज उत्पादन करते थे। तब अनाज और बीज की कोई कमी भारत में नहीं हुआ करती थी। ग्लोबलाइजेशन के दौर में सरकार की नीति की वजह से बीज पर किसानों का नियंत्रण समाप्त हो गया है। प्रोडक्ट को पेटेंट करने के नाम पर विदेशी कंपनियों को हाइब्रिड बीज उत्पादन करने की जिम्मेदारी सौंप दी गई है। जिसकी वजह से किसानों तक जो बीज पहुंच रहा है, वो काफी महंगा है। महंगा बीज खरीद कर अनाज का उत्पादन करने पर भी मुनाफा के बजाय घाटा उठाना पड़ रहा है। गरीब किसान और गरीब होते जा रहे हैं। वहीं विदेशी कंपनियों की झोली बढ़ती जा रही है। बीज पर नियंत्रण समाप्त होना किसानों के आत्महत्या की मुख्य वजह है।

किसान, बीज कंपनियों की ओर से पहले भी ठगे जा चुके हैं। झारखंड राज्य में वर्ष 2014-15 के दौरान वैकल्पिक खेती के तहत सरकार की और से कई जिलों में सरगुजा, कुलथी,

आलू के बीज बांटे गए थे । इन बीजों को लेकर वहाँ के किसानों ने खेती की, लेकिन फसल खराब हो गई। बाद में सरकार के द्वारा बीजों की जांच कराई गई । तो बीज घटिया मिले। बाद में कंपनियों को ब्लैक लिस्ट भी किया गया । बीज कंपनियां बिक्री से पहले सर्टिफिकेशन नहीं कराती है । ग्रामीण इलाकों में ऐसी कंपनियाँ अपना व्यापार बेरोकटोक चलाती है और जो भी नुकसान होता है, वह किसानों को उठाना पड़ता है ।

1.4.6 बाजारवाद के कारण रासायनिक कीटनाशकों का प्रयोग और मृदा-प्रदूषण:-

भारतीय किसान परम्परागत रूप से खेती में स्थानीय तकनीकों व संसाधनों का उपयोग करते थे । जिसमें स्थानीय बीज, वर्षा आधारित खेती व जैविक खाद थे जिसे सड़े-गले पत्ते व घासों का उपयोग कर बनाने में भारतीय किसान माहिर थे । पारम्परिक खाद के प्रयोग से फ़सल अधिक गुणवत्ता वाली होती थी । साथ ही आसपास का वातावरण साफ़ व स्वच्छ रहता था । एक-दो दशक पहले तक आम काश्तकार खेती से इतना उत्पादन कर लेता था कि परिवार का गुजर-बसर हो जाता था और अपनी आर्थिक जरूरतें भी पूरी हो जाती थीं । लेकिन आधुनिकता व बाजारवाद की आँधी ने किसानों का रुख जैविक खाद से रासायनिक खादों की तरफ मोड़ दिया । रासायनिक खाद, बीज व कीटनाशकों के प्रयोग से उत्पादन में वृद्धि हुई लेकिन एक सीमा के बाद उस पर बढ़ती लागत से किसानों पर आर्थिक दबाव पड़ने लगा ।

आज जिस गति से विश्व एवं भारत की जनसंख्या बढ़ रही है । इन लोगों की भोजन की व्यवस्था करने के लिए भूमि का जरूरत से ज्यादा शोषण किया जा रहा है । जिसके परिणाम स्वरूप आज भूमि की पोषक क्षमता कम होती जा रही है । पोषकता बढ़ाने के लिए मानव इसमें

रासायनिक उर्वरकों को एवं कीटनाशकों का जमकर इस्तेमाल कर रहा है। उद्योगों में रासायनिक या अन्य प्रकार के कई कचरे होते हैं, जिसे आसपास या दूर किसी स्थान पर डाल दिया जाता है। इससे उतने हिस्से में मृदा प्रदूषित हो जाती है और उतने भाग में पेड़-पौधे भी नहीं उग पातें हैं। किसान भी आज अधिक उत्पादन के लिए महंगे बीजों, कीटनाशकों और रासायनिक खादों का प्रयोग ज्यादा करने लगा है। जिससे खेती की जमीन लगातार अपनी गुणवत्ता खो रही है।

बाजारवाद के चलते आज संकर बीज किस्मों, रासायनिक उर्वरकों, नई तकनिकी व मशीनों के प्रयोग को प्रोत्सहित किया गया है। किसान अधिक उत्पादन बढ़ाने के लिए रासायनिक उर्वरकों जैसे यूरिया, डीएपी, कीटाणुनाशक तथा खरपतवार नाशक दवा का अत्यधिक उपयोग करने से मिट्टी की स्वाभाविक उर्वरा शक्ति में कमी हुई है तथा बड़ी मात्रा में कृषि-भूमि प्रदूषित हुई है। कृषि-भूमि को धीरे-धीरे रासायनिकों की लत से मुक्त कर हमें अपने देश में उपलब्ध जैविक खाद का भरपूर उपयोग करना होगा और किसानों को इस कार्य के लिए तकनीकी और आर्थिक सहायता देनी होगी। पर यह भी ध्यान में रहें कि केवल रसायनों को छोड़ने से मिट्टी की रक्षा नहीं हो पाएगी। इसके साथ-साथ यही भी करना है कि इससे गाँवों में वृक्षों की हरियाली बढ़ें और जल संरक्षण के समुचित उपाय हो।

इस अध्याय का विश्लेषण करने के बाद हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि देश के विकास और उसकी अर्थव्यवस्था में किसान का महत्त्वपूर्ण योगदान है, लेकिन किसान आज भी हाशिए पर हैं और दोयम दर्ज़े की जिंदगी जीने को मजबूर हैं। अगर हम भारतीय किसान जीवन के इतिहास पर दृष्टिपात करते हैं तो पाते हैं कि किसान की स्थिति न सिर्फ आज दयनीय बनी हुई है बल्कि सैकड़ों, हजारों वर्षों से जस-की-तस बनी हुई है। सरकार एवं कल्याणकारी संस्थाओं के

सारे वादे और प्रयास असफ़ल हो रहे हैं और अंततः किसान खुद को समाप्त करने पर मजबूर हो रहा है।

समकालीन किसान जीवन के परिदृश्य का विश्लेषण करने पर हम उनके जीवन के प्रत्येक स्थितियों से वाकिफ़ होते हैं। किसानों के नाम पर बनी सभी योजनाएं धरी-की-धरी रह गई हैं। उनके नाम पर हजारों, लाखों, करोड़ों की लूट हो रही है। नेता और नौकरशाह वर्ग फल-फूल रहा है, लेकिन किसान आत्महत्या कर रहे हैं।

हिंदी साहित्यकारों एवं बुध्दिजीवीयों ने किसान-जीवन के परिदृश्य को अलग-अलग माध्यम से रेखांकित करने का प्रयास किया है। रचनाकारों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से उनके परिदृश्य को उजागर किया है, जिससे की हम देख-समझ पाते हैं। इसी कड़ी में 'गोदान', 'फाँस' और 'आँखिरी छलांग' नामक उपन्यास में हम किसानों के समकालीन-परिदृश्य का विश्लेषण करते हुए पाते हैं कि हिंदी उपन्यासों में किसान आत्महत्या का जो रूप दिखाई पड़ता है वह वास्तव में उसका एक प्रतिरूप मात्र है, असल जिंदगी किसानों की इससे भी बदतर दिखाई पड़ती है, परन्तु उपन्यासों में उनके जीवन की कुछ झलक दिखाई पड़ जाती है जो संवेदनाओं को झकझोर कर किसान-जीवन पर सोचने के लिए मजबूर करती है। किसान आत्महत्या को उकसाने वाली पृष्ठभूमि को सामने लाने का महत्त्वपूर्ण कार्य ये उपन्यास करते हैं। उपन्यासों में खेती की समस्या, कर्ज़, बाजारवाद, सरकारी नीतियाँ, महंगाई, शोषण आदि किसान जीवन से जुड़ी समस्याओं का चित्रण हुआ है। समकालीन उपन्यासकारों ने केवल यथार्थ को अभिव्यक्ति नहीं दी, बल्कि आशावाद को ले जाने वाली स्थितियों के विरोध में लड़ने के लिए किसान जीवन को सुधारने के लिए अनेक अंतर्राष्ट्रीय सन्दर्भ भी दिए हैं। किसानों को अपने ऊपर मंडराते खतरे की

आहट भी इन उपन्यासों में मिलती हैं। किसानों की दुर्दशा के लिए जिम्मेदार तत्व और किसान आत्महत्याओं की जमीनी सच्चाई नई सदी के इन उपन्यासों में यथार्थ रूप से प्रकट हुई है।

इस प्रकार आज भारत के किसानों के समक्ष व्यापक चुनौतियाँ हैं। जिस बीज पर किसान इठलाता था, उसको बाजार की ताकतों ने अपने कब्जे में ले लिया। बीज महंगा हो गया, और फसल सस्ती हो गई। रासायनिक खादों ने जमीन की उर्वरकता को बढ़ाने के साथ मिट्टी की गुणवत्ता में कमी ला दी है। उस का आधार ही हिल रहा है। स्वास्थ संबंधी चुनौतियाँ भी कीटनाशकों और रासायनिकों की वजह से है। किसानों की फसल का थोक एवं समर्थन मूल्य में भी अंतर बहुत ज्यादा हो गया है। तथा सेज के नाम पर उसकी जमीन का अधिग्रहण होता जा रहा है। सरकार एवं कोरपोरेट का किसान विरोधी होना। यह कठिन समय है किसान का। जहाँ हर स्तर पर मुश्किलें खड़ी की जा रही हैं। उसके अस्तित्व और अस्मिता पर गहराता संकट अधिक सघन हुआ है।

अंततः यह कहा जा सकता है कि आज जरुरत है उन ढांचागत विकास कार्यों को अंजाम तक पहुँचाने का जिससे कृषि योग्य परिस्थितियां और सिंचाई के साधन विकसित हो सकें। साथ ही विकास कार्यों के लिए खेती योग्य भूमि का उपयोग न कर बंजर और मरुस्थलीय भूमि का उपयोग किया जाए। किसान खुशहाल होंगे तो देश खुशहाल होगा और बेरोजगारी, बेकारी तथा भुखमरी जैसी समस्याएँ स्वत: समाप्त हो जाएगी।

द्वितीय अध्याय

'महाजनी महात्म्य' और 'अकाल में उत्सव' में अभिव्यक्त किसान-जीवन

किसान-जीवन को लेकर आजादी के बाद भारतीय साहित्य में अनेक रचनाकारों ने विभिन्न विधाओं में साहित्य लिखा। उपन्यास विधा किसान-जीवन की वास्तविकता को अभिव्यक्त करने के निकट है। इस कड़ी में जगदीश चन्द्र, वीरेंद्र जैन और राजू शर्मा का विशिष्ट स्थान है। इसी कड़ी में अन्नाराम सुदामा और पंकज सुबीर ने किसान-जीवन के यथार्थ को उपन्यास विधा में अभिव्यक्ति देने का अभूतपूर्व कार्य किया। इस अध्याय में इन दोनों उपन्यासकारों के दो उपन्यासों को आधार-सामग्री के रूप में ग्रहण किया गया है। इन दोनों कृतियों के समय अन्तराल में 39 वर्षों का फासला है। लेकिन किसान जीवन की पृष्ठभूमि इन दोनों को जोड़ती है। पहली रचना में जहाँ परिवर्तन और बदलाव की आकांक्षा है वही दूसरी

रचना में उमीद की कोई किरण नज़र नही आती है। पहली रचना में आशावाद और स्वप्न के सहारे संघर्ष और प्रतिरोध की प्रस्तावना की गयी है वही दूसरी रचना में यह आशावाद निराशा और हताशा में बदलता है। सपने का मर जाना यहाँ प्रकट हुआ है। संघर्ष और प्रतिरोध की कोई चेतना यहाँ दिखाई नहीं देती है। दोनों उपन्यासों की पृष्ठभूमि दो प्रदेशों की है। इस कड़ी का हिस्सा किसान है। उसका जीवन, संघर्ष, स्वप्न, समस्यायें यहाँ अभिव्यक्त हुई है।

2.1 'महाजनी महात्म्य' में अभिव्यक्त किसान-जीवन:-

साहित्य समाज का दर्पण होता है। साहित्य और समाज में निकट का संबंध है। साहित्यकार समय के साथ-साथ समाज की विभिन्न सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक समस्याओं को साहित्य में चित्रित करता है। साहित्य में उपन्यास एक ऐसी विधा है, जो समाज या देश के साथ जुड़ी हर समस्याओं का चित्रण करने की एक कला है। स्थान, काल तथा परिस्थिति विशेष के अनुसार साहित्यकार समस्याओं का चित्रण करता है। गांव में रहने के कारण उनका प्रमुख व्यवसाय खेती रहा है। इसलिए कृषक जीवन प्रसंगानुरूप कठिन होता गया और समस्याएं बढ़ती गई। अन्नाराम सुदामा का जन्म भी ऐसे क्षेत्र में हुआ है, जहाँ का मुख्य व्यवसाय खेती ही रहा है इसलिए उनका ध्यान किसानों की ओर आकर्षित हुआ। उन्होंने देश की कृषक जीवन की समस्याओं को नजदीक से देखा है।

बहुमुखी प्रतिभा के धनी अन्नाराम सुदामा का उपन्यास 'मेवै रा रूंख' का हिंदी अनुवाद उपन्यासकार अन्नाराम सुदामा ने 'महाजनी महात्म्य' नाम से किया है। ‘महाजनी महात्म्य' उपन्यास किसानों की समस्या पर केंद्रित है। इस उपन्यास को अन्नाराम सुदामा ने किसानों को समर्पित किया है। उपन्यास के समर्पण में अन्नाराम सुदामा लिखते हैं कि "किसान के लिए सबसे बड़ा अभिशाप है कोई, तो वह है कर्ज़। घास, नाज, पाला, फलगटी मार सब में किसानों को ही है

। अपने बैलों को घास की ढीगली पर खुला छोड़ देते हैं, वे भी जी भर चरते हैं और कुछ पैरों के नीचे रेत में मिला देते हैं- वह गया किसान का, भाव में दो-चार रुपए कम, वह जूता भी किसान के ही सिर, तोल से अधिक, मोल में कम, ब्याज तो अलग है ही, फिर किसान का सुरक्षित फिर कैसे रहे ?"[18]

इस उपन्यास को आधार देने का श्रेय राजस्थान की ग्रामीण पृष्ठभूमि रही है । ग्रामीण जीवन का महाकाव्यात्मक चित्रण, सशक्त चरित्र–चित्रण और अपनी गहरी मानवीय संवेदना के नातें भारतीय कथा साहित्य की अपनी एक महत्त्वपूर्ण धरोहर है। इसमें साहूकारों, सरपंच, पटवारी आदि द्वारा भोली–भाली ग्रामीण जनता के शोषण का जीवंत चित्रण किया गया है। धर्म के नाम से मठाधीश किस तरह आम जन की भावना के साथ खेलते हैं। इसे भी इसमें भली-भांति उजागर किया गया है । उपन्यासकार राजस्थान के ग्रामीण क्षेत्र से सम्बंधित होने के कारण उन्हें वहाँ के किसानों की दशा-दिशा और दुर्दशा देखने और समझने का मौका मिला, वहाँ की जमीनी हकीकत को भी जाना-समझा । इसका भी हवाला दिया जिसके परिजन ने किसी कारणवश आत्महत्या कर ली थी। इस प्रकार किसानों की वास्तविक एवं जमीनी हकीकत से भी परिचित हुए और साथ ही इस क्षेत्र तथा समाज की सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक एवं राजनैतिक परिस्थितियों आदि से भी। इस प्रकार से अन्नाराम सुदामा का यह उपन्यास उनके द्वारा किये गये वर्क और गहन शोध का परिणाम हैं। 'महाजनी महात्म्य' उपन्यास की कथा 15 अंकों तथा 146 पृष्ठों में समाहित है । इसमें राजस्थान के किसानों की कथा के साथ-साथ भारत के उन तमाम किसानों तथा उनके परिवारों की कथा कही गयी हैं जो खेती किसानी के कर्ज़ से परेशान होकर आत्महत्या कर लेते हैं।

[18] अन्नाराम सुदामा,'महाजनी महात्म्य', पृ,सं. 105

'महाजनी महात्म्य' उपन्यास का नायक शिवनाथ है। जो भारतीय किसान जीवन का जीता-जागता चित्र है। जिसमें भारतीय कृषक के गुण और दोषों का एक साथ समावेश दिखाई देता है। जमींदार ही नहीं महाजन भी उनके शोषण में बढ़-चढ़कर भाग लेते हैं। "सरपंच, पटवारी और ग्रामसेवक इस समय भूमिगत हैं, चार दिन बाद, यहीं तो आएँगे, दूसरा कौन लगाएगा गले उन्हें, इत्ते में गर्म हवा ठंडी हो जाएगी... बनिया नोचता है परिचित को और कुत्ता अपरिचित को,... इस सरकार और इन सेठों की प्रकृति में अंतर ही क्या ? सरकार ही काटने में लगी है और ये भी उसी आग में पुले झोंकने में लगे हैं। सरकारी तंत्र अस्पताल लाकर काटता है और दूसरा दुकान में, पर दूसरा सरकार से भी भारी पड़ता हैं, उसका सोच-समझकर काटा हुआ जीवन-भर भी स्वस्थ नहीं हो पाता।"[19] अन्नाराम सुदामा उपन्यास के माध्यम से मूल क्रांति का आह्वान करते हैं। वे शोषित वर्ग के प्रति सहानुभूति और शोषक वर्ग के प्रति आक्रोश उत्पन्न करते हैं, और उसमें साम्यवादी प्रभाव भी लक्षित होता है। उसके खोखले आदर्शों से विश्वास उठ जाता है, और वह यथार्थ स्थिति के उद्घाटन से किसी सबल क्रांति की कामना करता है।

2.1.1 भूमि की उर्वरकता में आयी कमी:-

भारत के पास अमेरिका के बाद दुनिया की सबसे अधिक कृषि योग्य भूमि है, हालाँकि सच्चाई यह है कि किसान ज़मीनी स्तर पर आज भी पिछड़ा हुआ है ऐसे में सवाल यह है कि आखिर क्यों कृषि योग्य भूमि होते हुए भी देश का किसान का न तो उत्पादन बड़ा पा रहा है और ना ही मुनाफ़ा कमा पा रहा है ? इसके लिए कुछ जानकार देश के विरासती कानून को ज़िम्मेदार मानते हैं जिसके तहत पिता की जायदाद को बच्चों में बराबरी में बाँट दिया जाता है जिसके

[19]अन्नाराम सुदामा, 'महाजनी महात्म्य' पृ.सं. 70-71

चलते ज़मीन के टुकड़े छोटे होते चले जाते हैं छोटे टुकड़े होने वाली ये खेती कृषि के पिछड़ेपन और उत्पादन में कमी लाती है।

पंचवर्षीय योजनाओं में कृषि क्षेत्र से जुड़ी विफलताओं को लेकर आर्थिक उदारीकरण की राह पर बढ़ते देश में कृषि की दयनीय स्थिति सबके सामने है। एक और कंक्रीट का फैलता जंगल और खेती की बर्बादी तो दूसरी ओर आसमान छूती कीमतों के दौर में किसान के श्रम का अपमान। एक ओर भूमि अधिग्रहण तो दूसरी ओर किसान की फसल का न्यूनतम समर्थन मूल्य लगातार उसके श्रम का उपहास उड़ाता है। स्थितियाँ 'गोदान' में भी वही थी और 'महाजनी महात्म्य' में कमोबेश वही है होरी और शिवनाथ दोनों की समान स्थिति है। धनिया और शिवनाथ की पत्नी का सच भी एक-सा है और उनके संतानों के हिस्से में आयी विडम्बना भी कुछ अलग नहीं है।

2.1.1.1 जमीन की प्रकृति:-

किसानों की एक बड़ी समस्या है जमीन। साल 2015 में आयी विश्व बैंक की एक रिपोर्ट के मुताबिक भारत की तकरीबन 60.3 फीसदी भूमि कृषि योग्य है। भारत के वाणिज्य व उद्योग मन्त्रालय द्वारा बनाये गयें ट्रस्ट इंडिया ब्रांड इक्विटी फाउन्डेशन की रिपोर्ट भी यही कहती है कि भारत के पास अमेरिका के बाद दुनिया की दूसरी सबसे अधिक कृषि योग्य भूमि हैं। हालाँकि सच्चाई यह है कि जमीनी स्तर पर आज भी देश उत्पादन के मामले में पिछड़ा हुआ है। संयुक्त राष्ट्र के खाद्य एवं कृषि संगठन ने साल 2014 में एक रिपोर्ट में कहा था कि भारत की 44 हेक्टेयर जमीन पर 10.619 करोड़ टन चावल की पैदावार की गयी। मतलब प्रति हेक्टेयर 2.4 टन, जो उत्पादन श्रेणी में भारत को दूनिया के 47 देशों की सूची में 27 वें स्थान पर रखता है।

ऐसे में सवाल है कि आखिर क्यों कृषि योग्य भूमि होते हुए भी देश का किसान न तो उत्पादन बढ़ा पा रहा है और ना ही मुनाफ़ा कमा पा रहा है। पिछले कई दशकों से औसतन कृषि जोत का आकार लगातार घट रहा है। साल 2012-13 में आयी भारतीय रिपोर्ट के मुताबिक, छोटे खेतों की संख्या कुल खेतों की संख्यां का 85 फीसदी है। लेकिन उनका क्षेत्रफल का मात्र 44 फीसदी है। इसका मतलब है कि देश में कुछ अमीर किसान हैं तो कुछ भूमिहीन। इसके तहत पिता की जायदाद को बच्चों में बराबरी से बाँट दिया जाता है, जिसके चलते जमीन के छोटे-छोटे टुकड़े होते चले जाते हैं। छोटे टुकड़े पर होने वाली खेती, कृषि के पिछड़ेपन और उत्पादकता में कमी लाती है।

2.1.1.2 परम्परागत बीजों का अभाव:-

दूसरा आता है बीजों का। अच्छी उत्पादकता के लिए उच्च गुणवत्ता वाले बीजों की दरकार होती है, लेकिन अपनी कीमतों के चलते अच्छे बीज सीमांत और छोटे किसानों की पहुँच से बाहर हैं। इसी समस्या से निपटने के लिए कृषि मंत्रालय के अधीन साल 1963 में राष्ट्रीय बीज निगम का गठन किया गया। साथ ही 13 राज्यों में बीज निगम स्थापित किये गयें ताकि किसानों की जरूरतों को पूरा किया जा सकें, लेकिन अब तक किसानों को अच्छे बीजों के लिए दर-दर भटकना पड़ता है।

2.1.1.3 खाद, उर्वरकों और कीटनाशकों की कमी:-

तीसरी समस्या है खाद, उर्वरकों और कीटनाशकों की उपलब्धता। देश में कई दशकों से खेती की जा रही है। इस स्थिति में गुणवत्ता को बनायें रखने के लिए खाद और उर्वरक का इस्तेमाल ही एकमात्र विकल्प बचता है। फसल को कीटों से बचाने के लिए कीटनाशकों का

इस्तेमाल भी अब किसानों के लिए जरूरी हो गया है। इन बढ़ती जरूरतों ने किसान का मुनाफ़ा घटाया है। कई बार उपजाऊ जमीन के बड़े इलाकों पर हवा और पानी के चलते मिट्टी का क्षरण होता है। इसके चलते मिट्टी अपनी मूल क्षमता खो देती हैं और इसका असर पैदावार पर पड़ता है। 'महाजनी महात्म्य' में शिवनाथ और अन्य गाँव के किसान अपनी गरीबी के चलते खाद, उर्वरक और कीटनाशक दवायें खरीद नही पातें है, तथा जो किसानों को उपलब्ध होता है वह भी ख़राब किसम का होने के कारण उनकी फसल नष्ट हो जाती है।

2.1.1.4 प्राकृतिक खादों के अभाव में जमीन का बंजर होना:-

'महाजनी महात्म्य' उपन्यास में किसानों की सबसे बड़ी समस्या है, भूमि का बंजर होना। किसान गरीबी के कारण उच्च किस्म की खाद नहीं खरीद पाने के कारण भूमि लगातार बंजर होती जा रही है। जिस देश के अर्थतन्त्र का मूल आधार कृषि हो, वहाँ एक तिहाई भूमि का बंजर होना असल में चिंता का विषय है। किसानों के पास सिंचाई की व्यवस्था लगातार ख़त्म हो रही है यह भूमि बंजर होने का मुख्य कारण है। किसान अब सिंचाई के पानी के लिए बरसात के पानी पर ही निर्भर रहते हैं। इस संबंध में अन्नाराम सुदामा लिखते हैं- "गाँव की कृषि-भूमि में खड़े खेत, वर्षा की ओर नज़र गढ़ाये उदासी ओढ़ रहे थे। अँधेरा धरती पर उतरने को उतावला था। अपने घोंसलों की ओर उड़ती चिड़ियों की अधीर चहचहाट और कौओं की काँव-काँव साथ मिलकर भी गुण-धर्म से विलग थी।"[20] इससे पता चलता है कि किसान बरसात के पानी पर कितना निर्भर रहता है !

जमीन को बंजर उस स्थिति में कहा जाता है, जब क्षरण से भूमि लगातार सूखती जाती है और अपने जल स्त्रोत खो देती हैं। साथ ही अपनी वनस्पति और वन्यजीव भी गँवा देती है।

[20]अन्नाराम सुदामा, 'महाजनी महात्म्य', पृ.सं. 12

रासायनिक खाद, कीटनाशकों के अंधाधुंध इस्तेमाल और गोबर-हरी खाद के कम उपयोग से देश की 32 फीसदी खेती योग्य जमीन बेजान होती जा रही है। जमीन में लगातार कम होते कार्बन तत्त्वों की वजह से जमीन पर फसलें बंद हो सकती है। प्रो. कृष्ण गोपाल सक्सेना गाँव के कनेक्शन के बारे में बताते हैं कि - एक तरफ रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का बेहिसाब इस्तेमाल हो रहा है। दूसरी तरफ पहले किसान फसल के अवशेष (डंठल, फूस, पत्ते आदि) को खेत में छोड़ देते थे। अब या तो चारा बना लेते हैं या जला देते हैं, इससे जमीन की उर्वरकता लगातार घट रही है।

हरित क्रांति के बाद किसानों द्वारा खाद उत्पादन की होड़ में अधिक से अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए तरह-तरह की रासायनिक खादों, जहरीले कीटनाशकों का उपयोग पारिस्थिक-तंत्र को प्रभावित करता है। जिससे भूमि की उर्वरकता शक्ति लगातार ख़राब होती जा रही है और वातावरण भी प्रदूषित होता जा रहा है।

2.1.2 न्यूनतम समर्थन मूल्य का न होना:-

फसलों पर मिलने वाला न्यूनतम समर्थन मूल्य भी किसानों के लिए गले की हड्डी बन गया हैं। किसानों की शिकायत हैं कि उन्हें अपनी फसल का सही मूल्य नहीं मिलता। वर्तमान में सरकार किसानों को उनकी फसल की लागत का कम से कम डेढ़ गुना मूल्य देगी। लेकिन किसान इससे संतुष्ट नहीं है, वे मानते हैं कि ईंधन के बढ़तें दामों के बीच न्यूनतम समर्थन मूल्य को बढ़ाये जाने से किसानों को कोई ख़ास फायदा नहीं होगा। एमएसपी को लेकर आर्थशास्त्री यह भी कह देते हैं कि अगर एमएसपी को बढ़ाया जायेगा तो देश में मुद्रास्फीति बढ़ेगी।

इन समस्याओं के अलावा किसानों की बाजार तक सीमित पहुँच, बिचौलियों की भूमिका, अपर्याप्त भंडारण सुविधा और कृषि में पूंजी की कमी ने उनकी स्थिति को और भी ख़राब कर दिया है। आज बेशक किसानों को कर्ज़ देने के लिए कई सरकारी संस्थाएँ सामने आ गयी है, लेकिन अब भी ऋण प्रक्रिया किसानों को आसान व सरल नहीं लगती, जिसके चलते किसान आज भी बैंकों से कर्ज़ लेने से कतरातें हैं और निजी कर्ज़ को तरजीह देते हैं। जब तक सरकारें इन मुद्दों पर ठोस तरीके से नहीं सोचेंगी तब तक किसानों की किस्मत नहीं बदलेगी।

2.1.3 ऋण की समस्या:-

आजादी के इतने वर्ष बीत जाने के बावजूद भी किसानों की स्थिति में कुछ खास बदलाव नहीं आ पाया है। आज भी गाँव के किसान भूख और कर्ज़ से परेशान होकर आत्महत्या करने के लिए मजबूर हो रहे हैं। 'महाजनी महात्म्य' कृषक-जीवन की दु:खद कहानी का मूल है। इसमें किसानों के जीवन की तमाम समस्याओं को मुखरित किया गया है। शिवनाथ और उनके जैसे अन्य किसानों की दुर्दशा का कारण आर्थिक विषमता है। ऋण समस्या के मूल में जहाँ एक और किसान वर्ग था वहीं दूसरी और महाजनी सभ्यता थी। जो किसानों के ऊपर मनमाना शोषण करते हैं। अन्नाराम सुदामा जी कर्ज़ की समस्या को लेकर लिखते हैं कि- "किसान के लिए सबसे बड़ा अभिशाप है कोई, तो वह है कर्ज़। घास, नाज़, पाला, फलगटी मार सब में किसान को ही है। गाड़ीवाले अपने बैलों को घास की ढिगली पर खुला छोड़ देते हैं, वे भी जी भर चरते हैं और कुछ पैरों से निकाल रेत में मिला देते हैं- वह गया किसान का, दस मन की जगह बारह-तेरह मन भरा,

वह भी गया किसान, भाव में दो-चार रुपये कम, वह जूता भी किसान के ही सिर, तोल से अधिक, मोल में कम, ब्याज तो अलग है ही, सिर किसान का सुरक्षित फिर कैसे रहे ?"[21]

'महाजनी महात्म्य' में अन्नाराम सुदामा ने सेठ धनजी और हजारीमल का जिक्र किया है यह दोनों इस जीवनसर गाँव के बड़े व्यापारी है। धनजी और हजारीमल जी किसानों को हमेशा अपने जाल में फंसाकर रखते हैं। इसी तरह इस उपन्यास में गंगू कुम्हार को धनजी कर्जे में डूबोकार रखता है। गंगू अपने कर्ज़ की आपबीती कहानी शिवनाथ को सुनाते हुए कहता है- "धनजी के यहाँ गया था, तुम्हारे से क्या छिपाऊँ, भाभी और घरवाली के गहने गिरवी रख रूपए आठसौ, उन अनचाहे बावों को चुकाने के लिए लाया। सौ रुपये के आसपास मेरे जीवित-खर्च के ही समझ ले, पेट-पूजा करवाकर आज ही विदा किया है उनको।"[22] इस तरह के कर्ज़ के जाल में फंसकर आज भी किसान लगातार आत्महत्या करने को विवश हो रहे हैं। उपन्यास 'महाजनी महात्म्य' को पढ़ते हुए ऐसा लगता हैं कि यह व्यवस्था किसानों के साथ छल कर रही है। मध्यम वर्ग के किसानों और छोटे किसानों का यही हाल हो रहा है, पहले किसान फसल बोने के लिए अपने घर में ही रखें बीज का प्रयोग करते थें, लेकिन नई तकनीकी के चलते उत्पादन में वृद्धि के लिए नये-नये बीजों का प्रयोग तथा उर्वर शक्ति बढ़ाने के लिये नयी-नयी खादों का प्रयोग करने लगें, ऐसी परिस्थिति में किसान बैंकों या सूदखोरों से कर्ज़ लेने को मजबूर हो रहे हैं। फसल अच्छी नहीं होने से या सूखा, बाढ़ जैसी आपदा के चलते किसान कर्ज़ चुका नहीं पाता है इससे दिन-प्रतिदिन कर्ज़ बढ़ता जाता है। फिर किसान ऐसी समस्याओं के मकड़जाल में फंसकर आत्महत्या करने को विवश हो जाते हैं। किसान की किस्मत तो कर्जे से बंधी ही है, उनको गरीबी के चलते लेना ही पड़ता है। इस प्रकार के कर्जों के प्रकरण में उस समय की तत्कालीन

---

[21]अन्नाराम सुदामा, महाजनी महात्म्य, पृ.सं. 105

[22]अन्नाराम सुदामा, महाजनी महात्म्य, पृ.सं. 15

आवश्कता ही देखी जाती है । भविष्य में फसल को बेचकर चूका देने की उम्मीद पर कर्ज़ ले लिया जाता है, लेकिन बाद में पता चलता है कि फसल पर कोई प्राकृतिक आपदा आ गयी या फसल आने से पहले ही कोई दूसरा बड़ा खर्चा सामने आ गया और कर्ज़ के स्थान पर पूंजी प्रवाह उस ओर करना पड़ता है । कर्ज़ तो कर्ज़ था, कब तक साहूकार देखता अन्ततः जमीनों को हड़प कर अपना पेट भर लेता है । छोटी जोत के किसान के सिर पर आपको कई प्रकार का कर्ज़ मिलेगा, जितना छोटा उसका खेत, उतने तरह का कर्ज़ा होता है ।

2.1.4 किसानों को लेकर प्रशासन का उदासीन रवैया:-

'महाजनी महात्म्य' उपन्यास में अन्नाराम सुदामा ने प्रशासन की परतें उघाड़ने का काम किया है । किसानों के प्रति सरकार के उदासीन रवैया को लोगों के सामने लाकर भ्रष्ट-तंत्र की सच्चाई को उजाकर किया है । सरकार के लोग किसानों से केवल वोट मांगने आते हैं उसके बाद कोई मंत्री उनके पास तब तक नहीं जाते, जब तक दूसरे चुनाव नहीं आ जाते । अन्नाराम सुदामा ने सरकार की सच्चाई को उजागर करते हुए कहा है कि सरकार ने आम किसान को केवल एक वोट बैंक मान कर ही रखा है । उपन्यासकार लोकतंत्र की कार्यशैली से बखूबी परिचित है । नौकरशाही, प्रशासनिक जगत, छुद्र राजनीति, आत्मसम्मान को गिरवी रख कर गुड-बुक बने रहने की टुच्ची हरकते करते हैं । यही भारत का सबसे घिनौना, सबसे भयंकर, सबसे त्रासद चेहरा है ।

किसान को डर लगता है तो वह सबसे ज्यादा पटवारी का लगता है । एक किसान ही बता सकता है कि पटवारी की भूमिका किसान के जीवन में कितनी महत्त्वपूर्ण हैं । प्रशासन में पटवारी ही ऐसा होता है जो ग्रामीण किसानों से जुड़ा होता है । पटवारी ही किसानों को लोन, तकाबी में पट्टे तथा मुआवज़ा दिलाता है और कोई भी ग्रामीण स्तर पर कार्य वही करवाता है । उसमें अपना हिस्सा अलग से लेता है । पटवारी के अलावा सरपंच, ग्रामसेवक, कलेक्टर इन सभी के द्वारा

किसानों का शोषण किया जाता है। किसानों की समस्या को लेकर अन्नाराम सुदामा लिखते हैं कि "इन्हें लोन, तकाबी, और पट्टे देने की अपेक्षा शिक्षा और संस्कार देने जरूरी है। अच्छे संस्कार तो अच्छी सरकार ही दे सकती है, पर इस मामले में वह ख़ुद ही नंगी है। चोटी की ऊँचाई से निकली गंगा ही धरती की प्यास बुझा सकती है। तस्कर, गुंडे और सिध्दांतहीन शासक, कुर्सियों पर कब्ज़ा कर लेते हैं जब, निम्न वर्ग भी तब अपना सोच खोते विवशतावश चोरों के चेहरे ही ताकते हैं, मतलब उन्हीं की कृपा पर जीते हैं और ठोस ईमानदार वर्ग उदासी ओढ़े पीड़ा भोगता है, यदि वह वर्ग अपने सत्य की सड़क से उंगल भी अलग न हो तो, ईमानदारी उसकी हवा जेल की ही खाती है। डर ईमानदारी को ही है।"[23]

शिवनाथ किसानों की समस्या को लेकर वहाँ की मंत्री कतारिया मैडम के पास जाता है लेकिन कतारिया उनको बिना मिले ही वापस भेज देती है। इन राजनैतिक लोगों का काम केवल चुनाव के समय का ही रह गया है। उनको किसानों की दुर्दशा से कोई मतलब नहीं है। चुनाव के समय बड़े-बड़े वादे करते हैं। न्यूनतम समर्थन मूल्य का हो या किसानों के कर्ज़ माफ़ी पर मुआवज़े दिलाने का यह सब चुनावी जुमले बनकर ही रह जाते हैं और बेचारा किसान इनकी बातों में आकर भारी मतों से जीतता है लेकिन उसके बाद उनकी ओर सरकार का रवैया जो रहता है, जो किसान दिन-रात मेहनत कर के देश के लिये अन्न उगाता है उसी को सरकार अनदेखा कर रही है। "गाँव-भर में केवल पन्द्रह-बीस आदमी ही ऐसे थे, जो दो-ढाई घड़ी से पंचायत के चबूतरे पर बेकार बैठे थे। पटवारी, ग्रामसेवक और सरपंच भी उन्हीं में थे। कुछ देर बाद शेयरों के पैसे बटेंगें, सहकारी समिति के दो-तीन अहलकार आएँगे। बीड़ी, सिगरेट और चिलमों का दौर चालू था। गप्पों का बाज़ार गर्म था। "[24] इस तरह सरपंच, पटवारी, ग्रामसेवक से लोग खाली बैठकर तमाशे

[23]अन्नाराम सुदामा, महाजनी महात्म्य, पृ.सं. 85
[24]अन्नाराम सुदामा, महाजनी महात्म्य, पृ.सं. 91

करते हैं लेकिन जब किसान किसी कारण इनके पास आते हैं तो अपने आपको व्यस्त बताने लगते हैं और उनकी बात अनसुनी कर देते हैं। किसान सरकार की कृषि नीतियों के चलते परेशान होकर आत्मघाती कदम उठाने को मजबूर हो रहे हैं।

सरकार द्वारा किसानों की अनदेखी के चलते उन्हें अपनी फ़सल की वाजिब कीमत नहीं मिल पा रही हैं, इस वजह से भी किसानों की लगातार माली हालत बनती जा रही हैं। चुनाव के दौरान प्रचार रैलियों में मतदाताओं के लिए आश्वासनों की बौछार की जा रही है लेकिन फसल नहीं होने और कर्ज़ में दबे किसानों को कोई दिलासा नहीं दिया गया। चुनावी बिगुल बजने के बाद से लगभग 174 किसानों ने आत्महत्या कर ली है। लेकिन इसके बावजूद चुनाव प्रचार की भागदौड़ की वजह से इस और किसी का भी ध्यान आकर्षित करने का समय नहीं मिल पाया है। किसानों की आत्महत्या तथा उसकी आर्थिक समस्याओं की अनदेखी की जा रही है। देश के लिए अन्न उत्पादन करने वाला किसान आज सड़कों पर आकर आन्दोलन करने को विवश हो रहा है।

2.2 'अकाल में उत्सव' में अभिव्यक्त किसान-जीवन:-

'अकाल में उत्सव' पंकज सुबीर का हाल ही में प्रकाशित उपन्यास है जिसकी चर्चा हम यहाँ कर रहे हैं। पंकज सुबीर ने अपने पहले ही उपन्यास 'ये वो सहर तो नहीं' (2009) में जो उम्मीदें बोई थी वो 'अकाल में उत्सव' तक आते-आते फलीभूत होती दिख रही हैं।

"2016 में प्रकाशित पंकज सुबीर का उपन्यास 'अकाल में उत्सव' सरकारी तंत्र का किसानों के प्रति उनकी सोच और मानसिकता का एक्सरे करता हुआ यह उपन्यास हमारे मौजूदा

समय की एक गंभीर समस्या से टकराता है। यहाँ हम आज भी कहते हुए नहीं अघाते हैं कि भारत एक कृषि प्रधान देश है, जय जवान के साथ जय किसान का नारा बुलंद आवाजों में लगाया जाता है। आज खुद उसी किसान की आवाज में खेती उपेक्षा का शिकार और किसान आत्महत्या का शिकार हुए हैं। घाटे की सौदा बनती हुई खेती तथा कपड़े और चेहरे पर पड़ी झुरियाँ देखकर उसकी खुद की आने वाली पीढ़ी का किसानी से तेजी से मोहभंग हुआ है।"[25]

पंकज सुबीर का उपन्यास पढ़ने के बाद महसूस होता है कि किसान आपदा का मारा हुआ नहीं बल्कि व्यवस्थाओं का मारा हुआ है। 'अकाल में उत्सव' नाम की व्यंजना से ही उपन्यास के कथ्य का पता चलता है। एक तरफ अकाल है तो दूसरी तरफ उत्सव है। एक तरफ मरण है तो दूसरी तरफ जश्न और आनंद है। एक और जन है तो दूसरी और तंत्र है। दरअसल यह उपन्यास व्यवस्था के दो ध्रुवों की कथा है, जिसमें एक ध्रुव के प्रतिनिधि कलेक्टर श्रीराम परिहार हैं वहीं दूसरे ध्रुव के प्रतिनिधि किसान रामप्रसाद है। अपने छोटे कलेवर में यह उपन्यास प्रशासन और किसान के बृहद प्ररिप्रेक्ष्य को रचता है।

'अकाल में उत्सव' उपन्यास किसान समस्या को इतिहास बोध के आईने में रखकर उनकी पीड़ा को समझने का प्रयास करता है। आज सरकारें जब किसानों को कुछ सब्सिडी देकर अपनी पीठ थपथपाती हैं। वह किसानों की रहनुमा होने का दावा करती हैं। किन्तु ठीक इसके विपरीत पंकज सुबीर ने अपनी स्थापना देकर यह सिद्ध किया है कि– "यह दुनिया की सबसे बड़ी कृषि आधारित अर्थव्यवस्था है, जिसमें हर कोई किसान के पैसों पर अय्याशी कर रहा है। सरकार कहती है कि सब्सिडी वह बाँट रही है जबकि हक़ीकत यह है कि न्यूनतम समर्थन मूल्य के आँकड़े में उलझा किसान तो अपनी जेब से बाँट रहा है सबको सब्सिडी। यदि चालीस साल में

---

[25]अपनी माटी, ई-पत्रिका, किसान विशेषांक, अप्रैल-सितम्बर-2017

सोना चालीस गुना बढ़ गया तो गेहूं भी आज चार हजार के समर्थन मूल्य पर होना था, जो आज है पन्द्रह सौ। मतलब यह कि हर एक क्विंटल पर ढाई हजार रूपये किसान की जेब से सब्सिडी जा रही है।"[26] सब्सिडी के संबंध में पंकज सुबीर बताते हैं कि- "नेहरू ने कहा था कि यदि देश की तरक्की देखनी है तो किसान सेक्रिफाइज करे लेकिन यह नहीं बताया कि कब तक करे ? आज तक वह किसान सेक्रिफ़ाइज करता आ रहा है। ... किसान की जेब से सब्सिडी ली जा रही है। ... और उस पर भी यह तुर्रा कि हम एक कृषि प्रधान देश में रहते हैं।"[27]

'अकाल में उत्सव' उपन्यास की कथा दो समानान्तर कहानी के रूप में चलती है एक प्रशासन की, दूसरी किसान की। किन्तु दोनों एक-दूसरे के पूरक है। कथा में असली मोड़ तब आता है जब टूरिज्म विभाग की तरफ से उत्सव मनाने का फंड आता है। उस फंड को कलेक्टर निर्देशानुसार कहीं और ठिकाने लगाकर उत्सव के फंड का बंदोबस्त शराब के ठेकेदारों और नगर निगम से किया जाता है। मोहन राठी कलेक्टर श्रीराम परिहार को कहते हैं कि- "आप चिंता मत करिए सर,... कोई भी परेशानी नहीं आयेगी इसमें। बल्कि अब तो मेरा प्रयास रहेगा कि ज्यादा से ज्यादा बच के जाए। देखिए कवि सम्मलेन तो पूरा डाल दीजिए आप शराब के ठेकेदार पर। हाँ... वह भी इन दिनों राजनीति में सक्रिय है लेकिन, उससे क्या होता है ? है तो शराब का ठेकेदार ही न ? आना तो आपके ही पास है, साल के आखिर में ठेके की नीलामी के समय।"[28] इस काम की भूमिका निभाते हैं सामाजिक कार्यकर्ता मोहन राठी और रमेश चौरसिया जैसे जनता और प्रशासन के बिचौलियें तथा राहुल वर्मा जैसे पत्रकार। हमारे देश में प्रसाशनिक अमला किस तरह कार्य करता है। किस तरह जिले की सत्ता कलेक्टर के आस-पास घूमती है। इसका बारीक़

---

[26]पंकज सुबीर, अकाल में उत्सव, पृ.सं. 42-43

[27]पंकज सुबीर, अकाल में उत्सव, पृ.सं. 42

[28]पंकज सुबीर, अकाल में उत्सव, पृ.सं. 83

विश्लेषण इस उपन्यास में प्रस्तुत है। कलेक्टर की शैली आज भी अंग्रेजों के ज़माने वाली है। लेखक ने उनके लिये 'बिना ताज का राजा' शब्द का प्रयोग किया है। किसान और कलेक्टर का संबंध प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष दोनों रूप में जुड़ा हुआ होता है। राजस्व-प्रणाली की जो कड़ी है उसमें कलेक्टर, एसडीएम, तहसीलदार, गिरदावर और पटवारी आते हैं। यह पटवारी सबसे छोटी इकाई होने के कारण किसान से सीधा जुड़ा होता है। चाहे सरकारी नीतियों का लाभ हो या राजस्व वसूली हो इसी के माध्यम से होता है। इसलिए किसान के जीवन में पटवारी की एक महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है।

गाँव का नाम 'सूखा पानी' भी बेहद रोचक है आदिवासी क्षेत्र होने के साथ ही मुख्यमंत्री का विधानसभा क्षेत्र भी है। किसान के हित के लिए बनी नीतियाँ भ्रष्टाचार की भेंट चढ़ किसान का ही गला घोट देती है। सरकार की व्यवस्था किसान (के.सी.सी) किसान क्रेडिट कार्ड का असली लाभ तो बैंक मैनजर के मिली भगत से फर्जी दस्तावेज लगाकर दलाल उठा लेते हैं। ऐसी ही त्रासदी का शिकार किसान रामप्रसाद होता है। उसके नाम तीस हजार का कर्ज़ चुकाने का नोटिस घर पर मिलता है। जब उसे पता चलता है तो उसके पैर से जमीन हिल जाती है। फिर शुरू होता है बैंक से लेकर तमाम कार्यालय तक की भागदौड़ जो किसान के लिए अतिरिक्त समस्या की तरह है। वैसे कर्ज़ किसान के जीवन का अभिन्न हिस्सा की तरह हो गया है। इसलिए तो यह प्रचलित है कि एक किसान कर्ज़ में पैदा होता है और कर्ज़ में जीता है और कर्ज़ में ही मर जाता है। इसी समस्या पर बल देते हुए पंकज सुबीर ने लिखा हैं "हर छोटा किसान किसी-न-किसी का कर्ज़दार है, बैंक का, सोसायटी का, बिजली विभाग का या सरकार का। सारे कर्जों की वसूली इन्हीं आर.आर.सी.(रेवेन्यूरिकवरी सर्टिफिकेट) के माध्यम से पटवारी और गिरदावरों को करनी होती है। वसूली कितना खौफनाक शब्द है।... यह जो कुर्की है, यह अपने नाम से ही किसान को

डराती है। कुर्की में वसूली से ज्यादा डर इज्जत उतरने का होता है। किसान, कर्जा, कलेक्टर और कुर्की चारों नामों को साथ लेने में भले ही अनुप्रास अलंकार बनता है, लेकिन यह किसान ही जानता है कि इस अनुप्रास में जीवन का कितना बड़ा संत्रास छिपा हुआ है।"[29]

किसान के जीवन में परेशानियां एक-के-बाद एक लगी रहती है उसका जीवन परेशानियों का जंजाल बन जाता है। एक तरफ फसल की मार तो दूसरी तरफ बाबाजी का मंदिर बनवाने का प्रण। यहाँ धर्म भी सुख-शांति के बजाय दुःख और परेशानी का सबब बनकर आता है। कोई बाबा है उन्होंने प्रण ले लिया है कि वह पचास गांवों में या तो मंदिर बनवायेंगें या पुराने मंदिर का जीर्णोद्धार करवाएंगे किन्तु इसका पैसा अपनी जेब से नहीं बल्कि गाँव के किसान देंगे। "रामप्रसाद जैसे किसान, जो बड़ी मुश्किल से अपने परिवार के लिए ही खाने का अनाज बचा पाते हैं, वह मंदिर के लिए अनाज कहाँ से देंगे भला ? लेकिन मामला धर्म का है, सो देना ही है।... भगवान वास्तव में भय का ही दूसरा नाम है, इसलिए शायद उसका भय के साथ अनुप्रास भी बैठता है। भगवान, भक्त और भय। और भूत...? ... लेकिन कैसा भगवान है यह ? जो गरीब किसान के बच्चों के निवाले छीन कर, अपने रहने के लिए विशाल घर रूपी मंदिर बनवाता है। कैसे नींद आती होगी उसे इन मंदिरों में ?"[30]

डॉ. मैनेजर पांडेय ने इस उपन्यास पर टिप्पणी करते हुए लिखा है– "यह गाँव और किसान जीवन के दुःख-दर्द कहने वाली रचना है। इस उपन्यास को पढ़कर कहा जा सकता है कि किसान-जीवन में आजकल सुख कम और दुःख ज्यादा है।"[31]

---

[29]पंकज सुबीर, अकाल में उत्सव, पृ.सं. 26-27

[30]पंकज सुबीर, अकाल में उत्सव, पृ.सं. 162-163

[31]पंकज सुबीर, अकाल में उत्सव, पृ.सं. (उपन्यास के फ्लैप से साभार)

रोहिणी अग्रवाल जी लिखती हैं कि– "उपन्यास बड़े फलक से साथ क्रूर सच्चाइयों को महीन परतों के साथ उघाड़ने में समर्थ है। 'अकाल में उत्सव' किसान आत्महत्या जैसे बड़े सामाजिक सरोकार के संदर्भ में समय का अक्स प्रस्तुत करता है।"[32]

'अकाल में उत्सव' मूलतः जनमत का आख्यान है इस देश में दो देश हमेशा रहे हैं। रामप्रसाद और श्रीराम कलेक्टर के दो ध्रुव पर खड़ा यथार्थ पाठक को विचलित कर देता है। 'गोदान' का होरी किसान से मजदूर बन गया था। 'अकाल में उत्सव' का रामप्रसाद किसान से भिक्षुक बन जाता है। हमारे देश ने इतने सालों में 1936 से 2016 तक इतनी प्रगति की है।

'अकाल में उत्सव' में रामप्रसाद और कमला के दुखों का जीवन भारतीय किसान की आत्मकथा का सरीखा बन जाता है। इसको पढ़ते हुए निराला जी की पक्तियां याद आती हैं -

दुःख ही जीवन की कथा रही।

क्या कहूँ आज जो नहीं कही॥

इस जीवन में धर्म, संस्कृति, व्यवस्था, परम्परा सबने घेर रखा है। छोटे-छोटे वाक्यों में पंकज सुबीर पूरा दृश्य खड़ा कर देते हैं। किसान के जीवन के दुःख का पता उसकी पत्नी के कम होते गहनों से ही चल जाता है। कमला की तोड़ी बिक गयी, बिकनी ही थी। छोटी जोत के किसान की पत्नी के शरीर के जेवर क्रमश: घटने के लिए ही होते हैं। इस अपार दुःख के बीच दाम्पत्य के विरल प्रसंग भी है, जो हृदय में संचित हो जाते हैं।

अपने चरम पर पहुँचकर उपन्यास का नायक रामप्रसाद आत्महत्या करता है। आत्महत्या कोई बड़ी घटना नहीं है। अब भारतीय राजनीति और व्यवस्था ने सामान्य नागरिक की

---

[32]पंकज सुबीर, अकाल में उत्सव, पृ.सं. (उपन्यास के फ्लैप से साभार)

आत्महत्या को मनोरंजन के साधन में बदल डाला है। रामप्रसाद की आत्महत्या से ज्यादा दु:खद है कि उसे पागल सिद्ध करने की कोशिश में पूरा अमला जुट जाता है और गवाही किसकी, पति की मृत्यु के दुःख में खुद पागल जैसी हो रही पत्नी कमला की। रामप्रसाद की आत्महत्या के बाद श्रीराम परिहार एंड कम्पनी गिद्ध भोज करती है। यह उस समाज की तस्वीर है जो सुशिक्षित है।

रामप्रसाद जैसे किसान की समस्या भारत के किसान की समस्या है। जहाँ पर श्रीराम परिहार जैसे कलेक्टर अफसरशाही की सनक में सत्ता के साथ गोटी बैठाने के चक्कर में किसान का उनके लिए कोई महत्त्व नहीं है। उसके लिए उत्सव प्रिय है। अकाल की चिंता नहीं तभी तो एक तरफ कलेक्टर से साथ पूरा महकमा जश्न और उत्सव मना रहा है। वहीं रामप्रसाद हताश और निराश होकर आत्महत्या कर रहा होता है। आत्महत्या के बाद वहीं लिपा-पोती का दौर शुरू होता है। व्यवस्था की खामियों से उपजी किसान की आत्महत्या धूर्त अफसरशाही उसे पागलपन का रूप दे देती है। आज भी किसानों की आत्महत्या पर नेताओं के यदा-कदा सतही और भडकाऊ बयान सुनने को मिल जाता है। उपन्यास का अंत बहुत ही मर्मस्पर्शी है। 'तीन दिवसीय रंगारंग' उत्सव का विराट सम्मलेन के साथ समापन होता है।

2.2.1 भूमि की उर्वरकता में आयी कमी:-

एक जमाना था जब हमारे देश में खेती को सबसे उत्तम कार्य माना जाता था। महाकवि घाघ की कहावत है –

'उत्तम खेती, मध्यम बान।

निषिध चाकरी, भीख निदान॥'

अर्थात् खेती सबसे अच्छा कार्य है। व्यापार मध्यम है, नौकरी निषिध है और भीख सबसे बुरा कार्य है। लेकिन आज हम अपने देश के हालात पर नज़र डाले तो आजीविका के लिए निश्चित रूप से खेती सबसे अच्छा कार्य नहीं रह गया है। हर दिन देश के 2000 किसान खेती छोड़ रहे हैं और बहुत से किसान ऐसे हैं, जो खेती छोड़ देना चाहते हैं। भारत के पास अमेरिका के बाद दुनिया की सबसे अधिक कृषि योग्य भूमि है, हालाँकि सच्चाई यह है कि किसान ज़मीनी स्तर पर आज भी पिछड़ा हुआ है ऐसे में सवाल यह है कि आखिर क्यों कृषि योग्य भूमि होते हुए भी देश का किसान का न तो उत्पादन बड़ा पा रहा है और ना ही मुनाफ़ा कमा पा रहा है। इसके लिए कुछ जानकार देश के विरासत कानून को ज़िम्मेदार मानते हैं जिसके तहत पिता की जायदाद को बच्चों में बराबरी में बाँट दिया जाता है जिसके चलते ज़मीन के टुकड़े छोटे होते चले जाते हैं छोटे टुकड़े होने वाली ये खेती कृषि के पिछड़ेपन और उत्पादन में कमी लाती है। यही स्थिति 'अकाल में उत्सव' के रामप्रसाद की बनी हुई है रामप्रसाद को उसके पिता से विरासत में मात्र दो एकड़ ज़मीन मिली है इतनी छोटी जोत में रामप्रसाद का पारिवारिक खर्चा चलाना भी मुश्किल होता है। इसके साथ-साथ लगातार प्राकृतिक संसाधन भी नष्ट होते जा रहे हैं। ज़मीन से पानी का स्तर भी नीचे जा रहा है, जिससे सिंचाई की समस्या बनी है। आज केवल कृषि मानसून पर ही निर्भर रह गयी है। किसान लगातार बारिश पर निर्भर रहता है।

पंचवर्षीय योजनाओं में कृषि क्षेत्र से जुड़ी विफलताओं को लेकर आर्थिक उदारीकरण की राह पर बढ़ते देश में कृषि की दयनीय स्थिति सबके सामने है। एक और कंक्रीट का फैलता जंगल और खेती की बर्बादी तो दूसरी ओर आसमान छूती कीमतों के दौर में किसान के श्रम का अपमान। एक ओर भूमि अधिग्रहण तो दूसरी ओर किसान की फसल का न्यूनतम समर्थन मूल्य लगातार उसके श्रम का उपहास उड़ाता है। स्थितियाँ 'गोदान' में भी वही थी और 'अकाल में

उत्सव' में कमोबेश वही है होरी और रामप्रसाद दोनों की समान स्थिति है। धनिया और कमला का सच भी एक-सा है और उनके संतानों के हिस्से में आयी विडम्बना भी कुछ अलग नहीं है। डॉ. प्रज्ञा के अनुसार- "औपनिवेशिक सामन्ती समाज से घिरे 'गोदान' और भूमंडलीकरण के आर्थिक समाज से घिरे 'अकाल और उत्सव' का व्यापक परिवेश बदल चुका है और इसी बदले हुए आर्थिक परिदृश्य से जुड़े अनेक आसन्न ख़तरों पर कथाकार की निगाह गई है।"[33] किसान की उपज के न्यूनतम समर्थन मूल्य के बहुराष्ट्रीय कंपनियों के फ़ूड प्रोडक्ट के अधिक मूल्य के बीच फासले में खतरा सामने हैं कि आने वाले दिनों में खेती को चौपट करके पूरी तौर पर आयात किया जायेगा। शहरों में कृषि भूमि को महँगी आवासीय योजनाओं के चलते चौपट किये जा रहे हैं। अन्य कई कारणों के अलावा परिवार में बंटवारे के चलते भी पीढ़ी दर पीढ़ी खेती की जोत का आकर घटता जा रहा है। देश के लगभग 85% किसान परिवारों के पास दो हैक्टर से कम ज़मीन है इससे भी प्रति एकड़ भूमि की लागत बढ़ जाती है। बेमौसम बारिश, ओलावृष्टि, बाढ़, सूखा, चक्रवात आदि से फसलों के नुकसान की स्थिति में किसानों को तत्काल व समुचित राहत पहूँचने में हमारे देश का तंत्र व्यवस्था प्रभावी साबित नहीं हो पाई है। ऐसा सी.इस.ई. के अध्ययन में सामने आया है।

पिछले 15 सालों में किसानों की संख्या एक करोड़ से बढ़कर 11.50 करोड़ को पार कर गयी, जबकी खेती की ज़मीन करीब दो करोड़ हैक्टेयर घट गयी। औद्योगिक और सेवा क्षेत्र के दम पर बढ़ रही अर्थव्यवस्था खेती का बोझ कम करने में नाकाम रही है। इस हालात में उद्योगों को विकसित करने के नाम पर खेती योग्य जमीन उद्योगपतियों को दी जा रही है। इस स्थिति के बीच विशेष आर्थिक क्षेत्र भूमि के बड़े पैमानें पर अधिग्रहण ने आग में घी डालने का काम किया

[33]सुधा ओम ढींगरा (सं.), विमर्श - अकाल में उत्सव, पृ.सं. 99

है। जमीन का आकार आपातकालीन स्थितियों को झेलने की क्षमता को सीधे तौर पर प्रभावित करता है। प्रतिशत में भले ही दोनों का नुकसान बराबर हो लेकिन दस एकड़ के किसान की आधी फसल बर्बाद होना एक ही बात नहीं होती है। एक एकड़ के किसान के लिए इसका मतलब है कि वह अपने परिवार का चंद महीने में पेट नहीं भर सकता। पिछले सालों में फसलों के नुकसान के बाद देखा गया की मध्यम या बड़े किसान अगली फसल की तैयारी करने में अधिक सक्षम थे। जबकि सीमांत किसानों के पास कोई और काम तलाश करने जैसी स्थिति बनी। यही स्थिति रामप्रसाद की बनी हुई थी। दो एकड़ जमीन में ही घर का पूरा खर्चा चलाना पड़ता था। छोटा किसान जब तक लड़ सकता है, तब तक लड़ता है और फिर हार कर मजदूर बन जाता है। किसान के जीवन में दुःख उसकी पत्नी के शरीर पर घटते जेवरों से आकलित किये जा सकता है। मजदूर कभी निर्माण की और किसान कभी भोजन की अय्याशी नहीं करता।

भौगोलिक परिस्थितियों के कारण अलग-अलग क्षेत्रों में सीमांत किसानों के पास बराबर जमीन होने पर भी उत्पदान कहीं कम कहीं ज्यादा है। फिर भी अपनी जरूरत पूरी करने के लिए उन्हें खेती के इतर अतिरिक्त मेहनत-मजदूरी करनी पड़ती है, क्योंकि सारी परिस्थितियाँ अनुकूल रहने पर भी उसके पास मौजूदा जमीन पर एक सीमा से अधिक उत्पादन असंभव है, जो जरूरतें पूरी करने के लिए अपर्याप्त है। कम जमीन होने का संकट यह भी है कि उपज की मात्रा कम होती है। जिसे मंदी या बाजार तक पहुँचाना बहुत खर्चीला साबित होता है। इसके अलावा एक और समस्या है खेतों में समुचित व्यवस्था की, वर्षा आधारित क्षेत्रों में किसी एक सीमांत किसान के लिए खेत में पानी के प्रबंधन की व्यवस्था बनाना बेहद मुश्किल और खर्चीला काम है। यह साफ़ है कि कम खेती की जमीन सीमांत किसानों की मुश्किलों की एक बड़ी वजह है।

डॉ. वी.एस निर्मल ने दिल्ली में एक संगोष्ठी में स्पष्ट कहा कि असली समस्या जमीन के गैर-बराबर वितरण की है। देश के ग्रामीण क्षेत्र में रहने वाला हर तीसरा परिवार भूमिहीन है और उनकी तरफ से आजादी से बाद से अब तक राज करने वाली प्रत्येक सरकार मुंह फेरे हुये हैं। अब तो सारी जमीन धीरे-धीरे कोर्पोरेट की भेंट चढ़ाई जा रही है। किसान धीरे-धीरे मजदूर बन रहे हैं और खेतिहर मजदूर गाँव से पलायन करने को मजबूर कर दिए गये हैं। मध्यप्रदेश में ज्यादातर दलित, आदवासी, भूमिहीन है और जिनके पास है भी तो उनकी जमीनों को कहीं गाँव के दबंग तो कहीं सरकार के नुमाईंदे हड़प रहे हैं। प्रधानमंत्री आवास योजना ऊपर लटकी जलेबी की तरह है। जिसकी चाशनी बूंद-बूंद टपक रही है और जलेबी तक पहुँचना पहुँच होने पर ही संभव है पुणे से इस संगोष्ठी में शामिल हुए चन्दन के सवाल 'असंगठित एवं खेतिहर मजदूरी को इस तरह अलग-अलग तराजू में न तौल कर, उन्हें जोड़कर रखा जाना क्या व्यवहारिक दृष्टि से सही नहीं होगा ?' पर निर्मल जी ने कहा कि– ग्रामीण अर्थव्यवस्था में किसानों के अलावा श्रम लगाने वाला प्रत्येक व्यक्ति खेती मजदूर कहलाता है। सरकार द्वारा बनायी जाने वाली योजनाएँ शहरी एवं शिक्षित वर्ग के लिए होती है। जबकी ग्रामीण क्षेत्र में बढ़ई, कुम्हार तथा छोटे किसान इत्यादि बिना कोई प्रशिक्षण के काम करते हैं। जिनके लिए सरकार कोई योजना नहीं बनाती।

हमारे देश में आबादी अधिक है और ज़मीन उस तुलना में काफी कम है उस पर भी ज़मीन हमारे देश में बहुत असमान आधार पर बँटी हुई हैं। हमें जोत की खासकर छोटी जोत की ज़मीन को बचाने के लिए उन्हें संकट से उबारना होगा और इस संकट से उबरने के लिए साझा खेती से बेहतर कोई विकल्प नहीं हो सकता। जिन आदिवासी और दलित बहुल गांवों से लोग पलायन कर गये हैं हमें उन गांवों को चिन्हित कर उनसे संपर्क करना चाहिए।

किसान का पहला मूल मंत्र धरती में बोए जाने वाले बीज तथा उर्वरकों की परख है। खाद-बीज जितना अच्छा होगा, उपज की गुणवत्ता उतनी ही बेहतर होगी। अच्छी गुणवत्ता वाला बीज यही बीजोपचार के साथ बोया जायेगा तो भरपूर पैदावार देगा। लेकिन किसान बेचारा अनपढ़ व अशिक्षित होने के कारण उसे उचित गुणवत्ता के बीज नहीं मिल पाते हैं और यही समस्या 'अकाल में उत्सव' में रामप्रसाद के साथ बनी हुई है। अपनी गरीबी के चलते रामप्रसाद अच्छी किस्म के बीज नहीं खरीद पाता है। अमानक अथवा नकली बीज व खाद, धन व समय दोनों की बर्बादी का कारण बनता है। किसान की समस्या को समझने के लिए किसान होने की जरूरत भले न हो, लेकिन उसके दु:खों को करीब से देखना बेहद जरूरी है। पंकज सुबीर 'अकाल में उत्सव' में किसानों के साथ अंत तक खड़े नज़र आते हैं। गीता श्री ने उनके उद्धरण को इस रूप में प्रस्तुत किया है – " खेत में मौसम और भगवान के भरोसे खड़ी फसलें किसान की उम्मीद को इन हवाओं पर सवार हो-होकर झुलाती हैं। किसान की क़िस्मत भी बहुत अजीब होती है। और किसान की प्रार्थनाएँ भी वैसी ही होती हैं। जनवरी में प्रार्थना करेगा की मावठे का पानी गिर जाए तो खेतों में पानी फेरने का काम बचे। और फरवरी में प्रार्थना कि पानी नहीं गिरे, नहीं तो फसल ख़राब हो जाएगी।"[34] इस तरह किसान के सामने लगातार समस्या बनी रहती हैं।

जानकारी और परख के अभाव में किसान अच्छी किस्म का बीज न मिलने के कारण अपने आपको ठगा हुआ महसूस करता है। इस दौरान उसकी पूँजी और समय दोनों का नुकसान होता है। इसके साथ ही किसानों को बीज व अन्य कृषि अनुदानों के बारे में जानकारी नहीं होती है। उनको बीज व उर्वरक हमेशा सही जगह से नहीं मिल पाता है। जिससे उनको गुणवत्ता वाले बीज नहीं मिल पाते हैं। तथा उनको हमेशा ठगा जाता है। किसानों को बीजों का पक्का बिल

[34]सुधा ओम ढींगरा (सं.), विमर्श-अकाल में उत्सव, पृ.सं. 81

भी नहीं देते और बीजों के मूल्य भी बढ़ाकर उनसे वसूल करते हैं। सरकारें भी किसानों की समस्या को लेकर ज्यादा प्रभावित नहीं है। किसानों को बीज की किस्म, प्रति बीघा मात्रा, लागत मूल्य होने वाले उत्पादन तथा संभावित बीमारी के लक्षण व उपचार आदि से सरकारों को अवगत कराया जाना चाहिए। लेकिन ऐसा बहुत कम देखने को मिलता है। सरकार को उन्हें उन्नत किस्म का बीज बोने तथा बुआई से पहले बीजोपचार करने के लिए जागरूक बनाने का प्रयास भी शिविर के माध्यम से होना चाहिए, लेकिन सब इसके विपरीत होता है।

अच्छी उत्पादकता के लिए उच्च गुणवत्ता वाले बीजों की दरकार होती है। लेकिन अपनी कीमतों के चलते अच्छे बीज सीमांत और छोटे किसानों की पहुँच से बाहर है। इसके साथ ही खाद उर्वरकों और कीटनाशकों की उपलब्धता के कारण देश में कई दशकों से खेती की जा रही है। जिसके चलते अब एक बड़ा क्षेत्र अपनी उर्वरकता खो रहा है। अंत में किसान इन सबसे परेशान होकर आत्महत्या के लिए विवश होते हैं। लेखिका गीताश्री के अनुसार- "रामप्रसाद भी मरा, उसको मरना ही था अंत में। एक नहीं, अनेक रामप्रसाद मरे है देश में। वह मरता हुआ भी अकेला नहीं दिखता। उसकी मौत सामूहक मौत में बदल जाती है। एक किसान अपनी पूरी प्रजाति का प्रतीक होता है। उनके दुख-सुख सब एक समान। उसकी विपदाएँ एक सी और मौसम का कहर भी एक सा। देश के किसी छोर पर बसता हो यह किसान... हमारी सामूहिक चेतना में एक सा दिखता है।"[35]

किसानों की मजबूरियों का चिट्ठा आगे बढ़ाते हुए लेखक रहस्योद्घाटन करता है कि – 'एक एकड़ में खरपतवार नाशक, कीट नाशक और खाद का खर्च होता है, लगभग पांच रुपये। पलेवा और सिंचाई पर बिजली या डीजल का खर्च करीब तीन हजार रुपये प्रति एकड़ होता है।

[35]सुधा ओम ढींगरा (सं.), विमर्श-अकाल में उत्सव, पृ.सं. 86

इसके बाद गेहूं की कटाई तथा सात-आठ सौ रुपये एकड़ मंडी तक ढुलाई, एक हजार रुपये अन्य सभी प्रकार के खर्च होगा इस प्रकार का खर्चा होता है। इसमें किसान को कुछ नहीं मिल पाता है। इसमें बीज खरीदना उनके बजट से बाहर हो जाता है।'

रामप्रसाद थोड़ी-सी जमीन पर खेती करने की तमाम मुश्किलों और साहूकारों के कर्ज़ को झेलता है और साथ ही प्रकृति के प्रकोप का खतरा भी, जो महज कुछ घंटों में एक भयावह भविष्य की सौगात देकर गुजर जाता है।

आजादी को आज 72 साल हो चुके हैं लेकिन सेक्रिफ़ाएज किसान ही कर रहा है। बाकी किसी को भी सेक्रिफ़ाएज नहीं करना पड़ा। सबकी तनख्वाहें बढ़ी, सब चीजों के भाव बढ़े लेकिन उस हिसाब से किसान को जो न्यूनतम समर्थन मूल्य मिलता है उसमें बढ़ोतरी नहीं हुई। "1975 में सोना 540 रुपये का दस ग्राम आता था जो अब 2015 में तीस हजार के आस-पास झूल रहा है,... 1975 में किसान को गेहूं का न्यूनतम समर्थन मूल्य सरकार की ओर से तय था लगभग सौ रूपये और आज 2015 में मिल रहा है लगभग 1500। यदि सोने को ही मुद्रा मानें, तो 1975 में किसान पांच क्विंटल गेहूं बेच कर दस ग्राम सोना खरीद सकता था आज उसे दस ग्राम सोना खरीदने के लिए लगभग 20 क्विंटल गेहूं बेचना पड़ेगा।"[36] मतलब किसान को खेती के लिए एक डीजल खरीदना है तो उसे एक क्विंटल गेहूं बेच कर लगभग पैंतीस लीटर खरीद लेता था। आज डीजल लगभग 70 रुपये है और गेहूं 1500 रुपये मतलब एक क्विंटल गेहूं के बदले केवल 21 लीटर आयेगा।

1975 में एक सरकारी अधिकारी का जो वेतन 400 रुपये था, वह जाने कितने वेतन आयोगों को अनुशंसाओं के चलते अब लगभग चालीस हजार है, सौ गुना की वृद्धि उसमें हो

[36]पंकज सुबीर, अकाल में उत्सव, पृ.सं. 41-42

चुकी है। भारत में एक सांसद को सब मिलाकर तीन लाख रूपये प्रति माह मिलता है, लेकिन हम आज तक कोई ऐसी व्यवस्था नहीं बना पाए की हमारे लिए अन्न उपजाने वाले किसान को तीन हजार प्रति माह उसके परिवार को चलाने का दिया जाए। एक सांसद को साल भर में चार लाख की बिजली मुफ्त फूंकने का अधिकार है लेकिन किसान के लिए चार हजार को भी नहीं है और उसके बाद भी किसान सबके लिए सब्सिडी देता है। "कोई नहीं सोचता कि बाजार में अनाज का दाम बढ़े नहीं, इसके लिए किसान की जेब से सब्सिडी ली जा रही है। सब्सिडी किसान की जेब से जा रही है। ... यह दुनिया की सबसे बड़ी कृषि आधारित अर्थव्यवस्था है, जिसमें हर कोई किसान के पैसों पर अय्याशी कर रहा है। सरकार कहती है कि सब्सिडी वह बाँट रही है जबकि हक़ीकत यह है कि न्यूनतम समर्थन मूल्य के आंकड़े में उलझा किसान तो अपनी जेब से बाँट रहा है सबको सब्सिडी।"[37] छोटे किसान का पूरा परिवार मजदूर की तरह लगा रहता है ताकि मजदूर वाले पैसे को ही बचा सकें। इसके बाद भी अगर बीच में आसमानी-सुलतानी हो गयी तो उन हालत में किसान का क्या होगा ? यह आप ऊपर के आकड़ें से अनुमान लगा सकते हैं। छोटा और सीमांत किसान जीवन भर कर्ज़ में रहता है अपनी उपज में से सारे देश को सब्सिडी बांटता है और खुद कर्ज़ में डूबा हुआ रहता है।

पवन कुमार के अनुसार- "किसान की दुर्दशा पर तब्सिरा करते वक्त पंकज सुबीर ने रामप्रसाद के उन निजी लम्हों पर रोशनी डालने का प्रयास किया है, जो प्राय: अन्धेरें का शिकार होकर रह जाते हैं। तमाम लेखकों की लफ़्ज़ों की रोशनी इस अँधेरे को चीरने में नाकामयाब रहती है लेकिन पंकज सुबीर ने यहं भी अपनी उपस्थिति दर्ज की है।"[38]

---

[37]पंकज सुबीर, अकाल में उत्सव, पृ.सं. 42

[38]डॉ. सुधा ओम ढींगरा (सं.), विमर्श-अकाल में उत्सव, पृ.सं. 94

बंजर जमीन को ऐसी भूमि के रूप में परिभाषित किया जाता है जो सूख जाती है और उस क्षेत्र में नमी ख़त्म हो जाती हैं। यह क्षेत्र अपनी वाटरबोडिज को खो देता हैं। साथ ही जमीन कृषि कार्यों के लिए उपयोगी नहीं रहती है। जमीन आमतौर पर पानी की कमी के कारण बंजर होती है। इस कारण देश की 10 प्रतिशत जमीन बंजर है।

गौरतलब हैं कि 'अकाल में उत्सव' की कथा के केंद्र में स्थित गाँव का नाम 'सूखा पानी' है। सूखा पानी, पानी सूख जाता है तो तबाही, बर्बादी, सूखा, महामारी, भूख, गरीबी, शोषण जैसी समस्या आती है। नाम बेशक विचित्र है। 'सूखा पानी' और 'अकाल में उत्सव' में प्रयुक्त शब्द युग्म अपनी परस्पर विपरीत धर्मिता के कारण न सिर्फ हमारा ध्यान खींचते है बल्कि एक खास तरह की विडंबनाबोध की सृष्टि भी करते हैं। आर्थिक उदारीकरण और भूमंडलीकरण की प्रक्रिया के आरंभ होने के बाद हमारे देश में जिस खास तरह के आर्थिक पर्यावरण का निर्माण हुआ है पर उसने अभाव और उत्सव दोनों तरह की स्थितियों में एक ही साथ उल्लेखनीय इजाफा किया हैं। पवन कुमार के शब्दों में - "आम किसान आज भी मौसम की मेहरबानी पर किस हद तक निर्भर है मौसम के उतार-चढ़ाव के साथ ही किसानों की उम्मीदों का ग्राफ भी ऊपर नीचे होता रहता है। मौसम का परिवर्तन इस तेजी के साथ होता है कि किसान को संभलने का मौका भी नहीं मिलता।"[39] इस तरह देख सकते हैं कि मौसम पर किसान कितना निर्भर रहता है।

भारतीय किसान ज्यादा गरीबी के हालात में होने के कारण रासायनिक खाद तथा उर्वरक खरीद पाना उनके लिये मुश्किल होता है। जिससे किसानों की जमीन लगातार बंजर होती जा रही है। तथा किसान को यह जानकारी भी नहीं रहती हैं कि कौनसी फसल का उत्पादन जमीन के लिए किया जाये, जिससे फसल ऊपजाऊ बनी रहे। लगातार एक ही फसल का उत्पादन करने के

[39]डॉ. सुधा ओम ढींगरा (सं.), विमर्श-अकाल में उत्सव, पृ.सं. 90

चलते भी जमीन बंजर होती जा रही है। वास्तव में प्राकृतिक, खाद, भूमि का प्राकृतिक आहार नहीं है। 'भारतीय कृषि अनुसन्धान परिषद्' द्वारा किये गये प्रयोगों से ज्ञात हुआ हैं कि रासायनिक खाद के प्रयोग करने से भूमि की उपजाऊ शक्ति 20-25 वर्ष लगभग समाप्त हो जाती है तथा मिट्टी की आद्रर्ता निरंतर घटती जाती है। कीटनाशक विषैली दवाओं का समावेश खेती की लागत में वृध्दि के साथ अनेक रोग फैलाता है। वास्तव में किसानों की आत्महत्या रासायनिक खाद, जहरीली कीटनाशक दवाओं एवं महंगे कृषि यंत्रों आदि के प्रयोग के ही दुष्परिणाम है।

किसान के पास फसल उत्पादन करने के उचित साधन होने के कारण भी आज किसान कम फसल का उत्पादन करता है लेकिन प्राकृतिक आपदा के चलते वह भी उसकी खराब हो जाती है। स्मिता के अनुसार – "जिस फ़सल पर उनके और उनके परिवार की जिंदगी टिकी है, कई महत्त्वपूर्ण घरेलू कार्यों का पूर्ण होना टिका है,... बारिश और ओलावृष्टि से फ़सल को बचाने के लिए रामप्रसाद की पत्नी कमला सभी देवी-देवताओं से गुहार लगाती है, पर उसकी फरियाद ईश्वर सुन ही नहीं पाते हैं और ग़रीबों को और अधिक बर्बाद और फटेहाल होने के लिए छोड़ देते हैं। तभी आक्रोशित होकर लेखक ने लिखा है कि ईश्वर की कृपा-दृष्टि भी अमीरों पर बरसती है, जो ग़रीबों की गाढ़ी कमाई पर नगर उत्सव का आनंद ले रहे हैं।"[40] इतना ही नहीं, उपन्यास में रामप्रसाद जब आत्महत्या कर लेता है, तो उनकी आत्महत्या को भी बड़े लोग एक अवसर के रूप में देखते हैं और उसका अधिक से अधिक फायदा उठाते हैं।

1950-51 में भारतीय किसान मात्र सात लाख टन रासायनिक उर्वरकों का इस्तेमाल करते थे, जो अब बढ़कर 240 टन हो गया है। इससे पैदावार का तो खूब इजाफ़ा हुआ, लेकिन खेत, खेती और पर्यावरण चौपट होते चले गये हैं। करीब साल भर पहले इंस्टिट्यूट ऑफ़

[40]डॉ. सुधा ओम ढींगरा (सं.), विमर्श-अकाल में उत्सव, पृ.सं. 182

एग्रीकल्चर विश्व भारती, पश्चिम बंगाल के कृषि वैज्ञानिक डॉ. आर. टीराडो ने रासायनिक खादों का इस्तेमाल इसी तरह होता रहा तो आने वाले समय में बड़ा हिस्सा बंजर भूमि में तब्दील हो जायेगा। आज भी लगभग 74 प्रतिशत खेती मानसून के रहमो-कर्म पर निर्भर हैं। लेकिन हाल के वर्षों में यह बात सामने आयी है कि फसलों को सींचने के लिए पानी ही उपलब्ध नहीं है। दो दशक पहले तक देश की कृषि पर्यावरण असंतुलन की मार से बची हुई थी, लेकिन अब जंगलों की अंधाधुंध कटाई, पानी और हवा के प्रदूषित हो जाने के कारण खेती को भारी नुकसान उठाना पड़ रहा है। नदियों के लगातार प्रदूषित होते चले जाने के कारण मिट्टी ख़राब हो रही है। कुछ समय पहले अमेरिका की कैलीफोर्निया युनिवर्सिटी के वैज्ञानिक जैरोड़ वेल्श के नेतृत्व में कृषि वैज्ञानिकों के एक दल ने फिलिपिन्स की मशहूर चावल अनुसन्धान संस्था के साथ मिलकर एशिया प्रशांत में धान की पैदावार पर अनुसन्धान किया था। इसके मुताबिक पिछले 25 वर्षों में भारत में धान की पैदावार 10 से 18 फीसदी की दर से घटी है।

प्राकृतिक खादों की कीमतें इतनी अधिक होती है कि आम किसान के बजट से बाहर होती है जिससे रामप्रसाद जैसे किसान के लिए तो खरीदना तो दूर, नाम लेना भी मुश्किल होता है। सरकार को किसानों तक प्राकृतिक खाद पहुँचाने के लिए उन्हें सब्सिडी देना चाहिए ताकि छोटे किसान भी उचित खाद का प्रयोग कर सकें। किसानों के साथ बार-बार ऐसा भी होता हैं कि सस्ते खाद खेत की फ़सल को नष्ट भी कर देते हैं। इसलिए किसान के सिर पर हमेशा परेशानियाँ सवार रहती है।

2.2.2 ऋण की समस्या:-

पंकज सुबीर किसानों की ऋणग्रस्तता यानि महाजनी सभ्यता की बात ही नहीं करते, कृषि व्यवस्था की जड़ों में दीमक लगी राजस्व-प्रणाली की संरचना और कार्य-शैली के क्रूर सच को भी

उघाड़ते हैं जो अपनी मशीनरी आम आदमी की भागीदारी को लेकर उसे ब्युरोक्रेट यानि 'विशिष्ट' होने का दर्ज़ा भी दे डालती है।

'अकाल में उत्सव' में ऋण में फंसे एक किसान रामप्रसाद की मार्मिक कहानी है उसके चारों ओर सम्पूर्ण उपन्यास की रचना हुई है। रामप्रसाद की आर्थिक स्थिति का चित्रण लेखक ने उपन्यास के प्रारंभ में ही कर दिया है। "रामप्रसाद का पिता जब मरा तो जमीन के साथ बैंक का, सोसायटी का, सूदखोरों का कर्ज़ भी छोड़ गया था।"[41] पंकज सुबीर ऋण के जाल में फंसे रामप्रसाद के संबंध में ब्यौरा देते हैं कि सूदखोर रामप्रसाद से बोलता है कि- "आप दस हजार पर अंगूठा लगाएंगे और मिलेंगे आपको केवल चार हजार। छः हजार तो ब्याज के कट गये न भाई। अब छः महीने बाद केवल दस हजार ही लौटना है आपको।"[42] अगर रामप्रसाद छः महीने बाद कर्ज़ नहीं लौटा पाया तो सूद हर माह एक हजार के हिसाब से और लगेगा।

गाँव की बात हो और किसान का उल्लेख न हो यह संभव नहीं, गाँव और किसान दोनों इस तरह परस्पर आबद्ध हैं कि एक को छोड़ कर दूसरे की बात करना, अपने आप ही दूसरे पर बात हो ही नहीं सकती। या यूँकि एक की बात करना अपने आप ही दूसरे पर बात करना और अपने आप की बात करना भी है। चर्चा जब गाँव, किसान और भूमि की हो तो अधिग्रहण, मुआवज़ा, फ़सल, मौसम, ऋण और ब्याज जैसे शब्द खुद-ब-खुद उसमें शामिल हो जाते हैं। गाँव में आज भी विवाह और मृत्यु दोनों ही परिवार को समान रूप से कर्ज़ में डूबा कर चले जाते हैं। विवाह में भी वही होता है। मेहमान जुटते है, पूरे गाँव को और आसपास के रिश्तेदारों को खाना दिया जाता है और मृत्यु होने पर भी वही होता है। किसान इन आयोजनों में आने वाले खर्चों को भी वहन करता है। भले ही किसान की पत्नी के शरीर पर बचे एक मात्र गहने चांदी से

[41]पंकज सुबीर, अकाल में उत्सव, पृ.सं. 8
[42]पंकज सुबीर, अकाल में उत्सव, पृ.सं. 8

बनी 'तोड़ी' से पुरे होते हों। किसान की जद्दोजहद ये भी हैं कि वह 'तोड़ी' बेचें या गिरवी रखें। अर्थात् यहाँ किसान के पास उपलब्ध विकल्प कितने तंग है ये बात महसूस ही की जा सकती हैं।

इन गहनों की खरीद बेचने वाला एक ही समुदाय है जो 'साहूकार' के नाम से जाना जाता है। किसान और साहूकार का आपसी रिश्ता पुराना होता है और पूरी तरह विश्वास पर आधारित होता है। साहूकार ने तो अपना ही गणित और पहाड़े बना रखे हैं। साहूकार जब आता है, तो वह अपना जोड़-भाग किसान को बताने लगता है- "देख भाई तीन महीने का हो गया ब्याज, तो ढाई सौ के हिसाब से ढाई सौ तीया पन्द्रह सौ और उसमें जोड़े चार सौ पिछले तो पन्द्रह सौ और चार सौ जुड़ के हो गये छब्बीस सौ। उनमें से तूने बीच में जमा किये तीन सौ, तो तीन सौ घटे तो छब्बीस सौ में से तो बाकी के बचे अट्ठाइस सौ, ले मांड दे अंगूठा अट्ठाइस सौ पे। समझ में आ गया ना हिसाब ? कि फिर से समझाऊँ।"[43] किसान को क्या समझ में आयेगा वह चुपचाप से अंगूठा लगा कर के आ जाता है। रकम बढ़ती जाती, ब्याज बढ़ता जाता है और जेवर धीरे-धीरे उस ब्याज के दल-दल में डूबता जाता है। किसान के जीवन में बढ़ते दुःख पत्नी के घटते जेवरों से आंकलित किये जा सकते हैं। जेवर जो शरीर से उतर कर एक बार गिरवी रख जाये तो छुटते कब है ? पहले सोने के जेवर जाते हैं फिर उनके पीछे चांदी के जेवर। हर जेवर जब गिरवी के लिए जाते हैं तो इस पक्के मन के साथ जाता है कि दो महीने बाद फसल आएगी तो सबसे पहला काम इस ज़ेवर को छुड़वाना ही है लेकिन अगर यह पहला काम ही पहला हो जाता तो इस ऐश में साहूकारों की तिजौरियां और उनकी तोंदे इतनी कैसे फुल पाती।

---

[43]पंकज सुबीर, अकाल में उत्सव, पृ.सं. 24-25

संजय कुमार अविनाश के अनुसार “घोर विपत्ति के बावजूद भी अपनी प्रतिष्ठा को बचाने में अगर कोई अव्वल है तो वह है एक गरीब...!”[44] एक जगह किसान रामप्रसाद की पत्नी कहती है कि– “और नी तो कंइ, बेन-बेटी को विपदा भाई नी काम आएगा तो कौन आएगा। कपड़ा-लत्ता तो अभी सिलाओ ने कल फटी जाएगा, रिश्तेदारी फटी गी तो सिलाए भी नी... बेचारी सुनीता बई को तमारो ही तो आसरो है, भागीरथ तो कंइ करने से रयो।”[45]

किसान को पटवारी, गिरदावर, सरपंच जैसे लोग कैसे ऋण के जाल में फंसा के रखते हैं। इनके बारे में पंकज सुबीर लिखते हैं कि– “चौकीदार, पटवारी और गिरदावर, ये तीनों कितने महत्त्वपूर्ण लोग हैं... इनके पास होती है आर.आर.सी., जिसका पूरा नाम है रेवेन्यू रिकवरी सर्टिफिकिट।... सारे कर्जों की वसूली इन्हीं आर.आर.सी. के माध्यम से पटवारी और गिरदावरों को करनी होती है।... किसान, कर्जा, कलेक्टर और कुर्की चारों नामों को साथ लेने में भले ही अनुप्रास अलंकार बनता है, लेकिन यह किसान ही जानता है कि इस अनुप्रास में जीवन का कितना संत्रास छिपा हुआ है।”[46]

‘अकाल में उत्सव’ उपन्यास में मूल कथाओं के अलावा उपकथाएँ भी है जो कुछ खास बताती नज़र आती है। एक उपकथा बैंक के कर्ज़ की सुविधा को लेकर है ऐसा लगता है कि दलालों, बैंक के कथित भ्रष्ट अधिकारियों एवं कर्मचारियों द्वारा बैंक की कर्ज़ सुविधा जिन किसानों द्वारा किसान बना लिया गया है जिन किसानों द्वारा किसान क्रेडिट कार्ड से बैंक से कर्ज़ के आदेश निकाल दिए जाते हैं। उपन्यास के नायक किसान रामप्रसाद ने किसान क्रेडिट कार्ड बैंक से कोई कर्ज़ नहीं लिया फिर भी उसको डिफाल्टर बताकर वसूली का नोटिस थमा दिया

[44]डॉ. सुधा ओम ढींगरा (सं.), विमर्श-अकाल में उत्सव, पृ.सं. 207
[45]डॉ. सुधा ओम ढींगरा (सं.), विमर्श-अकाल में उत्सव, पृ.सं. 207
[46]पंकज सुबीर, अकाल में उत्सव, पृ.सं. 26-27

जाता है। रामप्रसाद को अंततः यही स्थिति गले में फंदा डाल कर कुएं में लटक कर जान देने को मजबूर कर देती हैं। आज भारत में कई रामप्रसाद जैसे किसान हैं जो इस तरह की समस्या से परेशान होकर आत्महत्या करने को विवश हो रहे हैं। डॉ. प्रज्ञा ने रामप्रसाद की आत्महत्या के संबंध में लिखा है कि- " 'अकाल में उत्सव' के रामप्रसाद की आत्महत्या के वाजिब कारण को सिरे से नज़रअंदाज किया जाना बरसों से जारी उस आँकड़े को सामने लाता है जहाँ एक बार किसान व्यवस्था की विसंगतियों से लाचार होकर आत्महत्या करता है तो दूसरी बार सरकार और नाभिनालबद्ध प्रशासन उसे कुछ और रंगत देकर मरे हुए को दोबारा मारकर राहत की साँस लेते हैं।"[47]

2.2.3 किसान-संबंधी योजनाओं में भ्रष्टाचारः-

किसानों को लेकर प्रशासनिक कर्मचारियों में भ्रष्टाचार की जड़ें इतनी गहराई तक पहुँच गयी है कि बिना सुविधा-शुल्क के कोई भी काम करने के लिए राजी नहीं हो रहे हैं, भले ही सरकार के द्वारा आम जनमानस के आर्थिक स्तर को मजबूत करने के उद्देश्य से कई महत्त्वपूर्ण योजनाएं चलाई जा रही है। जिसके क्रियान्वयन के लिए अधिकारियों, कर्मचारियों के कंधे पर सरकार ने जिम्मेदारी दे रखी है। वह भ्रष्टाचार के आकंठ में डुबाकर बिना सुविधा-शुल्क को कोई भी लाभ देने के लिए तैयार नहीं हैं। अभी हाल ही में प्रारंभ किया गया प्रधानमंत्री किसान सम्मान निधि योजना का मामला प्रकाश में आया है जहाँ संबंधित क्षेत्र के लेखपाल के द्वारा ग्रामीण से सत्यापन के नाम पर धन की उगाही की जा रही है।

किसानों के प्रति प्रशासनिक रवैये को लेकर पंकज सुबीर लिखते हैं– "सरकारी व्यवस्था शेर के शिकार करने समान होती है, जब शेर अपने शिकार से पेट भर खा लेता है, तो बाकी का

---

[47]डॉ. सुधा ओम ढींगरा (सं.), विमर्श-अकाल में उत्सव, पृ.सं. 104

शिकार अपने से छोटे जानवरों के मतलब गीदड़ों आदि के लिए छोड़ देते हैं। ... कुल मिलाकर यह कि जब ऊपर वाले का पेट भर जायेगा, तब नीचे वाले का रास्ता खुलेगा।"[48]

यहाँ पूरी प्रशासनिक विद्रूपता सामने आती है और उसकी निर्मम पड़ताल भी। बिना लाग-लपेट के सरकारी तंत्र को बेनकाब कर दिया गया है। एक भाषण में राजीव गाँधी ने कहा था कि केंद्र से कैसे एक रूपया चलता है और नीचे तक आते-आते चवन्नी में बदल जाता है। यही सरकारी न्याय है, बंदरबांट जो सबसे वंचित वर्ग को समूल नष्ट कर देती हैं। उपन्यास में पर खच्चे उड़ा दिए गये हैं कि कैसे क्रूर तंत्र काम करता है और उसका असर किसानों पर पड़ता है। जितनी भी सरकारी नीतियां है, योजनाएं हैं और उनके लिए मरता किसान, जिसके नाम पर बड़ी-बड़ी बातें करती हुई सरकारें सत्ता में आती जाती हैं।

सबसे ज्यादा ठगा गया है किसानों को। सबसे ज्यादा मरे हैं वे। सबसे ज्यादा बदहाल वे हैं, जो पूरे देश का पेट भरते हैं। जो उगाते है हमारे लिए अन्न, वे समय से पहले अस्त हो जाने को अभिशप्त। अनपढ़ किसान अपने हकों के लिए लड़ नहीं पाता। कर्ज़ में डूबता चला जाता है, उस पर न मौसम मेहरबान न प्रशासन। पटवारी, गिरदावर, साहूकार और कलेक्टर किसान के लिए कितने खतरनाक हैं यह किसान ही बता सकता है। किसान को सबसे ज्यादा अगर किसी का डर रहता है तो वह पटवारी का रहता है, वो किसान से सीधा जुड़ा होता है तथा खेत से संबंधी किसी भी कार्य को करने के लिए पहले किसान से पैसे वसूलता है।

कथा-लेखिका गीताश्री के अनुसार- "सरकारी उत्सवों के इस देश में कोई निगाह है ऐसी जो उस दुःख में प्रवेश कर सके। लेखक की निगाह होती है जो पर दुःख कातर हो उठती हैं।"[49]

---

[48]पंकज सुबीर, अकाल में उत्सव, पृ.सं. 15

[49]डॉ. सुधा ओम ढींगरा (सं.), विमर्श-अकाल में उत्सव, पृ.सं. 84

नोटबंदी के इस भीषण दौर में जब किसान की हालत और ख़राब हो गयी। उपन्यास में कैशलेस लेनदेन की तरफ पुरज़ोर संकेत किया गया है और उस पर करारी चोट भी। बिचौलियों और दलालों की भूमिका पर सवाल खड़े किये गये हैं, साथ ही किसान क्रेडिट कार्ड के नाम पर हो रही धांधली का खुलासा भी उपन्यास पढ़ते हुए ऐसे लगता है कि हम भी भीड़ में तमाशबीन बन कर देख रहे हैं। हमें गुस्सा भी आ जाता है और कुछ न कर पाने की अपनी लाचारी पर अफ़सोस भी होता है। पंकज सुबीर अपने इस उपन्यास में ब्यूरोक्रेसी की एक-एक परत को उद्धृत करते हुए उसकी नब्ज पर हाथ धरते हैं। इस लालफीताशाही का पूरा कच्चा-चिट्ठा तो वें उजागर करते ही हैं साथ ही जिला कलक्टरों के सामनें हाथ बांधें ए.डी.एम., चापलूसों, व्यापारियों, पत्रकारों, शराब के ठेकेदारों, पैसा और ताकत चाहने वाले जनसेवक, विरोधी पार्टियों के बुलवाए गये नेताओं, निगम प्रमुख, सूदखोरों और पटवारियों की लम्बी फ़ौज सामने ले आते हैं। मुख्यमंत्री को अपना सिक्का चमकाना था तो कलेक्टर को उसे खुश रखना था। अब दिक्कत असली फंड बचाकर बाहर से मैनेज करने की हो गयी यानी फंड की आउटसोर्सिंग। इसकी गिरफ्त में सारा जिला आ जाता है और पूरा तंत्र उजागर होता है।

'अकाल में उत्सव' में भ्रष्टाचार को लेकर सबसे बड़ी घटना तब घटित होती है जब बैंक का एक कागज आया था। सूचना थी कि उसनें अपनी 2 एकड़ जमीन पर किसान क्रेडिट कार्ड बनवाया था और तीस हजार रूपये निकाल लिए थे उसे जमा करने में देरी हो गई हैं। कुर्की की कार्यवाही हो सकती है। लेकिन रामप्रसाद ने और कर्ज़ लिया नहीं भूखा-प्यासा वह शहर भागा। बैंक पहुंचा वहाँ जाकर कहा कि उसने कर्ज़ लिया ही नहीं। बैंक में बताया गया कि पटवारी ही बताएगें। पटवारी साहब के पास पहुँचा तो पटवारी साहब बोलते है कि कलेक्टर बताएगा। जब रामप्रसाद कलेक्टरी पहुँचा तो संयोग से कलेक्टर ने उसे आश्वासन दिया। जाओ कुछ नहीं होगा।

लेकिन फिर बाद में पटवारी और ग्रामसेवक के द्वारा रामप्रसाद को परेशान किया जाता है। पटवारी कहता है कि जहाँ से भी हो, रेट के हिसाब से व दो हजार तीन सौ रूपये दें तो वह ग्रामसेवक को मना लेंगे और रामप्रसाद को मुआवज़ा मिल जायेगा।

इस उपन्यास में प्रशासन की कथित चालाकियों को भी बेपर्दा किया गया है। जैसा की उपन्यास की कथा कहती है, रामप्रसाद की आत्महत्या मुख्यमंत्री की बदनामी का कारण ना बनें उसके लिए जिला प्रशासन ने रातों-रात कुछ इस तरह मैनेज कर लिया किसान की आत्महत्या का असली कारण दबकर रह जाता है। सुबह मीडिया पहुँचता है तो उसे कुछ खास हाथ नहीं लगता है। निष्कर्ष यही निकलता है कि किसान क्रेडिट कार्ड का लोन कैसे चुकेगा। यह सोचकर रामप्रसाद पागल हो गया और उसने कुएं में लटककर आत्महत्या कर ली। यह बात रामप्रसाद के भाई भागीरथ और विक्षिप्त हो चुकी पत्नी कमला मीडिया को बताती है। मुआवजे और बच्चे को सरकारी नौकरी का आश्वासन देकर मामला रफा-दफा कर दिया जाता है।

'अकाल में उत्सव' को पढ़ते हुए पता चल जाता है कि प्रशासनिक तंत्र अपनी योजनाओं को लेकर किस तरह से भ्रष्टाचार करता है और अपने भ्रष्ट तंत्र के चलते रामप्रसाद को आत्महत्या करने तक मजबूर कर देता है। रामप्रसाद की तरह आज बहुत किसान भ्रष्ट-तंत्र के चलते आत्महत्या करने को विवश हो रहे हैं। इसका आकलन इस उपन्यास के माध्यम से होता है।

2.2.4 किसानों को लेकर प्रशासन का उदासीन रवैया:-

पंकज सुबीर ने इस उपन्यास में प्रशासन का इतना करीबी से चित्रण किया की लगता है लेखक वही खड़ा होकर सारी गतिविधियों को निहार रहा था। प्रशासन के शातिर मस्तिष्क को हर पल पढ़ रहा था और सूखा पानी गाँव के किसान रामप्रसाद की कथा ऐसी की लेखक उस

किसान के परिवार का हो, उसके दुःख-सुख में शामिल उसकी हर गतिविधि से वाकिफ़ है जैसे लेखक लिखता नहीं रहा, खेती-किसानी ही करता रहा है । इस उपन्यास में पंकज सुबीर ने प्रशासन के उदासीन रवैया को सबके सामने लाने का काम किया है। प्रशासन और सरकारें किस तरह से किसानों को अपने जाल में फँसाकर रखती हैं उसका पर्दाफास करते नज़र आते हैं।

इस उपन्यास में समानांतर चल रहें हैं दोनों 'उत्सव' रामप्रसाद की आर्थिक स्थिति का बद-से-बदतर होते जाना, और उधर 'नागर उत्सव' का आयोजन । ऊपर का आदेश है तो मुख्यमंत्री की बाध्यता है। कलेक्टर साहब की बाध्यता का अर्थ उनके अधीनस्थों और गुणों की बाध्यता है। लेकिन किसान की बाध्यता केवल उसी की बाध्यता है उसकी ओर किसी का ध्यान नहीं जाता। किसानों को सरकारों द्वारा मुआवज़ा देने को लेकर लगातार जाल में फंसाकार रखते हैं । सरकारें किसानों का कर्ज़ और मुआवजों को लेकर बड़ी-बड़ी घोषणाएं तो कर देती है । लेकिन किसानों तक पहुँच नहीं पाती है । इसी तरह इस उपन्यास में 'सूखा पानी' में बेमौसम बरसात में रामप्रसाद की गेहूं की फसल नष्ट हो गयी है। इसी फ़सल की आस थी। किसान का सारा लेन-देन इसी फसल पर टिका था। लेकिन जब पटवारी और ग्रामसेवक को किसानों को हुए नुकसान का हिसाब लगाने भेजा गया की मुख्यमंत्री साहब की नज़र में कोई गड़बड़ ना हो । अशोक प्रियदर्शी के अनुसार- "किस्सा-कोताह यह के पटवारी का कहना है कि जहाँ से भी हो, रेट के हिसाब से वह दो हजार तीन सौ रुपये दे तो वह ग्राम सेवक को मना लेगें और रामप्रसाद को मुआवज़ा मिल जायेगा।"[50]

इससे पता चल जाता है कि प्रशासन की किसानों के प्रति कितनी उदारता है ! एक तो किसान की फसल नष्ट हो गयी उसका दुःख और ऊपर से सरकार द्वारा मुआवज़ा देने के नाम पर

[50]डॉ. सुधा ओम ढींगरा (सं.), विमर्श-अकाल में उत्सव, पृ.सं. 107

दो हजार तीन सौ के और मांग रहा है। डॉ. पुष्पा दुबे, लेखक के शब्दों को यों बयाँ करती है - "प्रशासनिक व्यवस्था में खाने-पीने पर बड़ा जोर होता है, यदि खाया-पिया नहीं जा रहा है तो समझिए की व्यवस्था में कहीं कुछ गड़बड़ है।"[51] ऐसे वाक्यों के द्वारा प्रशासनिक व्यवस्था पर यह उपन्यास तीखे प्रहार करता है।

उपन्यास का एक उल्लेखनीय चरित्र और है कलेक्टर श्रीराम परिहार। जिसके मार्फ़त पंकज सुबीर प्रशासन और प्रशासक की परतें उघाड़ते जाते हैं। "जब मसूरी में इन आईएएस की ट्रेनिंग होती है, तो इनको एक ही बात सिखाई जाती है कि आपको काम कुछ नहीं करना है, आप काम करने के लिए नहीं बने हो, आप तो काम लेने के लिए बने हो। और उसमें भी आपको अपने अंदर यह विशेषता डवलप करनी है कि आप आदमी दो देखकर ही समझ जाओ कि उससे आप क्या काम ले सकते हैं।"[52] इन सब बातों को वही जान सकता है जो नजदीक हो या इन सारी स्थितियों से गुजरा हो।

पिछले दिनों सरकारों ने बैंकों के माध्यम से किसान ऋण बंटवाने की योजना पर काम किया है। जितने ऋण पैसे की कमी के चलते लिए जा रहे हैं। उससे कही ज्यादा फर्जी ऋण उठाये जा रहे हैं। जिसका नतीजा यह है कि लगातार किसान आत्महत्याएँ कर रहे हैं। उपन्यास के नायक रामप्रसाद के नाम से भी तीस हजार रूपये के बैंक लोन की आर.आर.सी. कटी है। नब्बे हजार करोड़ का बैंक कर्ज़ लेकर उद्योगपति विजय माल्या टहलते हुए विदेश जा बसता है और तीस हजार के फर्जी लोन की रिकवरी के बहुत से दर कर इससे पता चलता है कि किसानों को लेकर प्रशासन का रवैया उदासीन होता जा रहा है। किसानों की दुर्दशा पर सरकारी तंत्र द्वारा

[51]डॉ. सुधा ओम ढींगरा (सं.), विमर्श-अकाल में उत्सव, पृ.सं. 119
[52]पंकज सुबीर, अकाल में उत्सव, पृ.सं. 27

किये जा रहे मजाक पर ‘अकाल में उत्सव’ एक करारा तमाचा है, जिसकी गूंज सर्वत्र फैलनी प्रारंभ हो गई है।

तृतीय-अध्याय

विवेच्य उपन्यासों की भाषा-शैली

साहित्य की एक विधा है उपन्यास। उपन्यास आज के युग का महाकाव्य है। इसकी विशेषता है कि यह सरल एवं सहज तथा व्यक्ति के जीवन और समाज के निकट है। इसकी भाषा भी इसी तरह की है। अथार्त सहज, सरल, एवं जन की भाषा है। प्रत्येक उपन्यासकार अपनी रचना को लोगों तक पहुँचाने के लिए उपन्यास में उसी प्रकार की भाषा एवं बोली का प्रयोग करता है, जो लोग बोलते हैं। जैसा समाज वैसी संस्कृति, जैसा परिवेश वैसे ही सब कुछ उपन्यासकार रचना में डाल देता है ताकि लोग इसे पढ़ें तथा अपने समझकर इसमें साहित्यकार ने जो अपने मन की बात अभिव्यक्त की है, या कुछ कहना चाहा है वह पाठकों तक पहुंचे और पाठक समुदाय उसे ग्रहण कर ले। अत: उपन्यासकार का यह दायित्त्व हो जाता है कि अपनी रचना की भाषा को बहुत ही जतन के साथ तथा पाठक के ग्रहण योग्य स्तर पर ही रखें। साथ ही यह दायित्त्व रहता है कि भाषा के प्रयोग में वह साहित्यक मानदंडों को भी ध्यान में रखें। अन्नाराम सुदामा और पंकज सुबीर ने अपने इन उपन्यासों 'महाजनी महात्म्य' और 'अकाल में उत्सव' में बखूबी इसे निभाया है। दोनों उपन्यासों में ऐसा कहीं देखने को नहीं मिलता है कि भाषा के चलते रचना ही साहित्य के क्षेत्र में निम्नस्तर की हो जाए। दोनों उपन्यासों में लेखकों ने साहित्यिक उच्चता को बरकरार बनाये रखा है।

3.1 विषय-वस्तु:-

विषय-वस्तु किसी भी उपन्यास का पहला और सबसे महत्त्वपूर्ण तत्व है। अंग्रेजी में इसे 'प्लॉट' कहते हैं विविध घटनाओं के संयोजन को विषय-वस्तु कहते हैं। डॉ. प्रतापनारायण टंडन

के शब्दों में कहें तो कथा-वस्तु घटनाओं का वह साधारण या जटिल ढांचा है, जिसके द्वारा किसी उपन्यास की रचना होती है। बगैर कथावस्तु के किसी भी उपन्यास की कल्पना करना मुश्किल है। किसी बड़ी इमारत में जो स्थान नींव का होता है वहीं उपन्यास में विषय-वस्तु का होता है। विषय-वस्तु अत्यंत सूक्ष्म एवम् विरल होती है। यदि उपन्यास को उपन्यास बनाना है, तो उसकी विषय-वस्तु के महत्त्व को अस्वीकार नहीं किया जा सकता। उपन्यास के कथानक में रोचकता, मौलिकता, संभाव्यता, कौतूहल, संघर्ष, तारतम्यता, सुगठितता आदि गुणों का होना अत्यंत आवश्यक है।

'महाजनी महात्म्य' उपन्यास की कथा वस्तु राजस्थान के एक छोटे से 'जीवनसर' नामक गाँव की कथा है। राजस्थान की ग्रामीण पृष्ठभूमि पर लिखित यह कहानी ग्रामीण जन-जीवन के महाकाव्यात्मक चित्रण, सशक्त चरित्र-चित्रण और अपनी गहरी मानवीय संवेदना के नाते भारतीय कथा साहित्य को महत्त्वपूर्ण धरोहर है। गांवों में आज भी नई पीढ़ी से ठीक पहले वाली पीढ़ी पूरी तर अशिक्षित है। छोटे किसानों को महाजन पैसा उधार देकर किस तरह ब्याज वसूल रहें, कितना चुकता हो गया, कितना बाकी है, ये वो आज भी महाजन का समझाया ही जान पाता है। ब्याज वसूली का जो तरीका महाजन समझा दिया वहीं उस के लिए अंतिम सत्य बन जाता है। उपन्यास में साहूकारों, सरपंच, पटवारी आदि द्वारा भोली-भाली ग्रामीण जनता के शोषण का जीवंत चित्रण किया गया है। धर्म के नाम पर मठाधिश किस तरह आमजन की भावनाओं के साथ खेलते हैं, इसे भी भलीभांति उजागर किया गया है। राजनेताओं, महाजनों और सरकारी आधिकारियों की मिली भगत से कैसे विकास योजनायें धरी-की-धरी रह जाती है। कैसे ये लोग आपस में शिवनाथ और ईश्वर को लड़ाते हैं और अपना उल्लू सीधा करते हैं। इसका बड़ा ही यथार्थ वर्णन मिलता है

अंत में सूरदास, शिवनाथ, ईश्वर सिंह तथा अन्य गाँव वाले लोग मिलकर सरकार की दमनकारी शक्तियों का मुकाबला कर सकते हैं। इस और संकेत कर के उपन्यास समाप्त होता है।

'अकाल में उत्सव' की विषय वस्तु ग्रामीण परिवेश और शहरी जीवन की झांकी को एक साथ पेश करते हुए आगे बढ़ती है। यथार्थ एक ही समय में दो कहानियों का मंचन एक साथ उपन्यास में होता दिखता है। एक ओर मुख्यमंत्री के निर्वाचन क्षेत्र के एक गाँव 'सूखा पानी' का एक आम किसान 'रामप्रसाद' इस उपन्यास का प्रमुख पात्र है जिसकी आँखों में आने वाली फ़सल की उम्मीदें जवान है। तो वहीं दूसरी तरफ सरकारी अमले का मुखिया श्रीराम परिहार (आई.ए.एस.) है। जो शहर का क्लेक्टर है। जिसके इर्द-गिर्द कुछ अधिकारी, समाजसेवी, नेता, पत्रकार जैसे लोग है। जो इसी दौरान शहर में नगर उत्सव के आयोजन को लेकर सक्रिय है। जहाँ रामप्रसाद की उम्मीदें परिपक्व होने से पहले ही बेमौसम बरसात की वजह से उखड़ जाती हैं, वहीं दूसरी ओर नगर उत्सव का आयोजन बड़ी ठसक के साथ किया जाता है। रामप्रसाद के जीवन में उसकी पत्नी, बच्चे, भाई, बहिनें, बहनोई इत्यादि है जिनकी परिधि में वह केन्द्रीय पात्र के रूप में उबरता है। दूसरी ओर जैसा की अवगत है कि श्रीराम परिहार और उसके इर्द-गिर्द कुछ अधिकारी, समाजसेवी, नेता, पत्रकार टाइप लोग है जो नगर उत्सव के आयोगन को लेकर अपना उल्लू सीधा करने में लगे हुए हैं।

पंकज सुबीर ने प्रशानिक व्यवस्था की लुट-पाट, कवियों और पत्रकारों से लेकर अस्पतालों की नरक यात्रा और बैंकों के कामकाज के कहूआपन पर व्यापक बातचीत की है। भ्रष्टाचार के बारे में एस.डी.एम. राकेश पांडेय ने कहा है– "तो भ्रष्ट कौन नहीं है ? किस विभाग में भ्रष्टाचार नहीं है ? एक विभाग का नाम बता दिजिए जिसमें भ्रष्टाचार नहीं हो। हमारे सिस्टम में

भ्रष्टाचार अब एक टूल हो चुका है, जिसके बिना मशीन काम नहीं करती।"[53] भ्रष्टाचार को मिटाने का हर एक नया प्रयास भ्रष्टाचार का उदय करता है। उपन्यासकार ने भ्रष्टाचार को गंगा में डुबकी लगाने वाले लोगों के समानांतर रामप्रसाद, कमला और ऐसे ही अन्य गरीबों को सामने रखा है। यह उपन्यास किसानों की सारी परेशानियों और उनके द्वारा किये जा रहे प्रतिरोध की एक सच्ची तस्वीर सामने रखता है। एक जगह पंकज सुबीर ने आक्रोशित होकर लिखा है कि ईश्वर की कृपा-दृष्टि भी अमीरों पर बरसती है, जो गरीबों की गाढ़ी-कमाई पर नगर-उत्सव का आनंद ले रहे हैं इतना ही, नहीं उपन्यास में रामप्रसाद जब आत्महत्या कर लेते हैं, तो उनकी आत्महत्या को भी बड़े लोग अवसर के रूप में देखते हैं और उसका अधिक से अधिक फ़ायदा उठाने का प्रयास करते हैं। गरीब रामप्रसाद को पागल करार दिया जाता है। और अपने मातहतों के साथ मिलकर सभी गलत कामों पर पर्दा डालने का प्रयास किया जाता है।

3.2 भाषा-शैली:-

जीवन और साहित्य के बीच के संबंध को भाषा द्वारा जाना जा सकता है। निजी अनुभवों, सामाजिक उपलब्धियों को समाज तक सम्प्रेषित करने का काम भाषा ही करती है। "साहित्य की भाषा जन-भाषा ही से ही निकलती है। यह जितनी कृत्रिम और जीवंत होती है। यथार्थ को व्यक्त करने में उतनी ही सक्षम होती है। मुहावरों लोक में प्रचलित उक्तियों एवं शब्दशक्तियों, बिम्ब एवं प्रतीक, मिथक, फैंटेसी के बल पर सूक्ष्माति-सूक्ष्म भावों, संवेदनाओं को पाठक तक सम्प्रेषित करती है जबकि उपन्यास मनुष्य चरित्र के माध्यम से जीवन के विविध रूपों का उद्घाटन करता है।"[54] तब उसकी भाषिक संरचना की ओर उपन्यासकार को ध्यान देना पड़ता

---

[53]पंकज सुबीर, अकाल में उत्सव, पृ.सं. 172

[54]त्रिभुवन सिंह, उपन्यास शिल्प व प्रयोग, पृ.सं. 102

है। उपन्यास जटिल मानसिकता को वहन करके जीवन की त्रासदी को व्यक्त करने के लिए जन-भाषा में ही अपनी भाषा की खोज करता है। प्रेमचंद वार्तालाप को अनिवार्य मानते हैं वे लिखते हैं– "उपन्यास में वार्तालाप जितना अधिक हो और लेखक की कलम से जितना कम लिखा जाए उतना ही उपन्यास सुन्दर होगा वार्तालाप केवल रस्मी नहीं होना चाहिए। प्रत्येक वाक्य जो किसी चरित्र के मुंह से निकले मनोभावों और चरित्र पर कुछ न कुछ प्रकाश डालना चाहिए। बातचीत का स्वाभाविक परिस्थितियों के अनुकूल सरल और सूक्ष्म होना जरुरी है।"[55]

'महाजनी महात्म्य' उपन्यास में अन्नाराम सुदामा ने सामान्य जन मानस की भाषा का चुनाव किया है। इस उपन्यास में किसान जीवन का अत्यंत मार्मिक वर्णन मिलता है और वह भी उसकी अपनी देशज भाषा ठेठ मारवाड़ी में, उपन्यास में उपयुक्त मुहावरों की संक्षिप्तता और अर्थ-व्यापकता चकित करती है। इस उपन्यास में अन्नाराम कुछ ऐसे मुहावरें प्रयोग किये हैं-

> "आदमी ऐसे ही भी देखे, जिन्होंने पीठ कर रखी धरती की ओर और सीना कर रखा है सेठों की ओर।"[56]

छोटा किसान जब तक लड़ता है तब तक लड़ता है फिर हार कर मजदूर बन जाता है। अन्नाराम सुदामा इस 'महाजनी महात्म्य' उपन्यास में ठेठ मारवाड़ी देहाती शैली में कथा बुनते हैं इन्हें शहरी लोगों की तरह हड़बड़ी हैं। अन्नाराम सुदामा लोक-भाषा यानी मुहावरेदार-कहावतों युक्त भाषा का सफलतापूर्वक प्रयोग करते हैं। अन्नाराम सुदामा द्वारा इस उपन्यास में इस तरह के कुछ मुहावरें व कहावतें प्रयोग किये हैं–

> "काकोसा, टूटा लड़ ही अधिक टूटता है हमेशा।"[57]

[55]डॉ. रामविलास शर्मा, प्रेमचंद : कुछ विचार, पृ.सं. 102
[56]अन्नाराम सुदामा, महाजनी महात्म्य, पृ.सं. 144

"घर में नहीं अखत के बीज, बेटा खेले आखातीज।"[58]

"राजा-जोगी अगन-जल, उनकी उलटी रीत; डरता रहियो परसराम, थोड़ी पाले प्रीत।"[59]

"यह क्या राज़ है – बिना माथे का, न उसे आठ का ध्यान है और न साठ का।"[60]

"मेह और मौत का क्या भरोसा, कब आ पड़े ?"[61]

"किसकी घोड़ी कौन डाले चारा उसे ?"[62]

"मामा का ब्याह और माँ परोसनेवाली, अरोग रे बेटा रात अँधेरी।"[63]

"लोक हँसी और घर हानि, क्या लाभ इससे।"[64]

अन्नाराम सुदामा ने इस तरह से उपन्यास में कहावतों और मुहावरों का प्रयोग बहुत किया है। कहावतों और मुहावरे भाषा को सरस बनाते हैं। वरना भाषा मुर्दा हो जाती है। अन्नाराम सुदामा ने तो कहावतों का न केवल जम कर प्रयोग किया है वरन आज भाषा से गायब होती कहावतों और उनकी छीछालेदार होने का भी जायजा दिया है। अन्नाराम सुदामा ने भाषा का

---

[57]वही पृ.सं. 81
[58]वही पृ.सं. 89
[59]वही पृ.सं. 71
[60]अन्नाराम सुदामा, महाजनी महात्म्य, पृ.सं 68
[61]वही, पृ.सं. 59
[62]वही, पृ.सं. 92
[63]वही, पृ.सं. 92
[64]वही, पृ.सं. 127

स्तर न तो ज्यादा निम्न होने दिया है और न ही ज्यादा विशिष्ट रखा है। उपन्यास की भाषा का अपना रंग है। वैसे कह सकते हैं कि ‘गोदान’ में ‘मैला आँचल’ फेंटा जाये और उसमें अन्नाराम की कल्पना शीलता और विशेष कथा भंगिमा मिलाया जाये तो जो उपन्यास तैयार होगा वह ‘महाजनी महात्म्य’ जैसा होगा।

अन्नाराम सुदामा अपने कथ्य को भाषा के हथियार से और भी मार्क बना देते हैं। संभवतः इसलिए उनके पात्र शिवनाथ, पद्मा, ईश्वर, धनजी, हजारीलाल लोक भाषा का प्रयोग करते हैं। आवश्यकता पड़ें पर अंग्रेजी भी बोल लेते हैं और वो अंग्रेजी जो आज की आम फहम जुबान है। तभी तो ‘महाजनी महात्म्य’ के इस बेहतरीन प्रयोग के साथ-साथ अन्नाराम सुदामा ने किसानों और शहरी पात्रों की मानसिक दशा और उनके मन में चल रहें द्वन्द्वों-भावों को भी अभिव्यक्ति देने में जो चमत्कार उत्पन्न किया है, वह सराहनीय है।

पंकज सुबीर ‘अकाल में उत्सव’ उपन्यास में अपने साथ एक नई भाषा लेकर आये हैं। यह भाषा पाठक के साथ और अधिक संप्रेषणीयता के साथ संवाद करती है। पंकज सुबीर ने इस उपन्यास में उसी भाषा का प्रयोग किया है जिसके लिए वह जाने जाते हैं। व्यंग्य मिश्रित, कहावतों, मुहावरों, लोकोक्तियों को समेट हुए सीधी भाषा है। भाषा जो अंग्रेजी, उर्दू, संस्कृत के शब्दों का खुलकर प्रयोग करती है। ‘कोरी का समाई बड़ा जानपडा’, ‘निदडीया और घींचडीया’ की लोक कथाएँ तथा ‘पाडे का दूध निकलना’,’बड़े-बड़े सांप-संतोले आए’, ‘हम कहा आई बिच्छन देह’ जैसी भीत सी कहावतें और लोकोक्तियाँ बहुत अच्छे से कथानक में पिरोई गई हैं। ‘यह वो सहर तो नहीं’ में जो पक्ष बहुत मुखर होकर सामने आया था। इस उपन्यास में भी यह बहुत मजबूती के साथ न केवल सामने आता है बल्कि उपन्यास की पठनीयता को बढ़ाता है। उपन्यास में दो पक्ष है- किसान और प्रशासन। किसान का पक्ष करुणा का पक्ष हैं और प्रशासन

का पक्ष व्यंग्य का। पंकज सुबीर ने दोनों पक्षों में भाषा की विविधता को पूरी कोशिश के साथ प्रस्तुत किया है। जब कहानी प्रशासन पक्ष की बात करती है तो मुहावरों की, कहावतों की भाषा तीखे व्यंग्य करती है। प्रशासनिक व्यवस्था में खाने-पिने पर बड़ा जोर होता है, यदि खाया-पिया नहीं जा रहा तो समझिए की व्यवस्था में कहीं कुछ गड़बड़ी है। जैसे वाक्यों के द्वारा प्रशासनिक व्यवस्था पर यह उपन्यास तीखे प्रहार करता है। वहीं जब किसान की कथा में उपन्यास प्रवेश करता है तो एकदम स्वर बदल कर करुण स्वर में बात करने लगता है। 'किसान के जीकें में बढ़ते दुःख उसकी पत्नी के शरीर के घटते जेवरों से आकलित किये जा सकते हैं।' 'पिता कहीं नहीं जाता वह अपने सबसे बड़े बेटे में समा जाता है।' 'छोटा किसान जब तक लड़ सकता है, लड़ता है फिर हार कर मजदूर बन जाता है।' जैसे संवेदना भरे वाक्य उपन्यास के अकाल खंड में आते हैं। एकदम पैने वाक्य जो कई बार पाठक को गहरे अवसाद में खींच ले जाते हैं। पंकज सुबीर ने दोनों समानांतर कहानियों की भाषा पर चर्चा की है। यह सजगता दिखाई भी देती है। देवेन्द्र आर्य वरिष्ठ लेखक उनकी भाषा को लेकर लिखते हैं– "भाषा में अनगिनत मुहावरों के तड़के इस उपन्यास को अत्यंत पठनीय और अर्थवान बनाते हैं। जहाँ भाषा के स्तर पर उपन्यास आकृष्ट करता है, वहीं भाषा के प्रति किंचित लापरवाह और गैर-साहित्यिक रवैया खलता भी है। नज़दीकी वाक्यों में दो बार कम से कम का प्रयोग हो अथवा... ये बेध्यानियाँ अखरती हैं। थोड़ा सा सचेत होकर भाषा दुरस्त और कसी जा सकती थी।"[65]

व्यंग्य और करुणा की दो समानांतर लहरे एक-दूसरे से टकराती है तो अपनी मौलिकता बनाये रखती हैं। प्रशासनिक कथा में अंग्रेजी का खूब उपयोग हैं तो किसान कथा में मध्यप्रदेश के मालवा अंचल की बोली मालवी का खूबसूरत उपयोग किया गया है। मालवी का उपयोग करके

[65]डॉ. सुधा ओम ढींगरा (सं.), विमर्श-अकाल में उत्सव, पृ.सं. 140

लेखक ने उपन्यास के आंचलिक हो जाने के खतरे को भी उठाया हैं। भाषाई प्रयोग में ‘अकाल में उत्सव’ एक विशिष्ट उपन्यास है।

3.3 शीर्षकों की सार्थकता:-

उपन्यास का शीर्षक उसकी कथावस्तु के अनुकूल होना चाहिए। साथ ही प्रमुख चरित से सर्वथा जुड़ा होना चाहिए। उपन्यास का शीर्षक घटनाप्रधान, नाटकप्रधान या ऐतिहासिक होना आवश्यक है। उपन्यास के उद्देश्य को भी स्पष्ट करने में शीर्षक की महत्ता समझी जाती है। शीर्षक प्रभावशाली, कलात्मक एवं आकर्षिक होता है तो, पाठक उसे पढ़ने के लिए उत्सुक एवं जिज्ञासु बना रहता है। शीर्षक आकर्षक एवं प्रभावोत्पादक होने से उपन्यास दिलचस्प बना रहता है। पाश्चात्य विद्वान चार्ल्स बेरेट शीर्षक की परिभाषा देते हुए लिखते हैं –

“A good title is apt, specific,

Attractive new and short.”

शीर्षक संदर्भानुकूल, निश्चयात्मक, आकर्षक, नवीन एवं लघु हो तो उत्तम है। शीर्षक पाठक की उत्सुकता एवं जिज्ञासा को प्रबल करता है।

‘महाजनी महात्म्य’ उपन्यास के शीर्षक से ही पता चलता है कि, जो बलवान हो, मजबूत हो। जो अपनी जरुरत के लिए दूसरों का शोषण करता है। जो शोषित वर्ग का और ज्यादा शोषण करने वाला। इन महाजनों के सारे कामों की गरज महज पैसा होता है। उपन्यास में किसानों का लगातार शोषण होता रहता है। जिसमें मुख्य शोषण करने वालों में जमींदार, साहूकार, व्यापारी, पटवारी, ग्रामसेवक आदि। ये सब महाजन मिलकर किसानों का शोषण करते हैं। मनुष्य समाज दो वर्गों में बंटा हुआ है। एक बड़ा हिस्सा तो मरने और खपने वालो का है और एक बहुत ही

छोटा हिस्सा उन लोगों का है जो अपनी शक्ति और प्रभाव से बड़े समुदाय को अपने बस में किये हुए हैं। इन्हें इस बड़े भाग के साथ कोई हमदर्दी नहीं है। इस उपन्यास में सेठ धनजी और हजारीमल जी छोटे किसानों को अपने ऋण के चंगुल में फँसाकर उनसे अधिक से अधिक ब्याज वसूलते रहते हैं। ऐसे ही पटवारी, जमींदार, साहूकार ये सब महाजन ही होते हैं। जिनको किसानों की चिंता बिल्कुल नहीं होती है। इसलिए इस उपन्यास का शीर्षक 'महाजनी महात्म्य' रखना सार्थक है। 'महाजनी महात्म्य' शीर्षक उपन्यास के उद्देश्य को स्पष्ट करने में समर्थ है। 'महाजनी महात्म्य' शब्द नाम से ही आकर्षक है जो पाठक को अपनी और आकर्षित करता है।

सवाल है कि महाजन कौन है, क्यों है और उसे महाजन किसने बनाया ? यह महाजनी ताकत कहाँ से और कैसे आयी की जो गरीब को और गरीब और किसान को मजदूर बना दें। किसी की मुश्किलों को और बढ़ा देता है। इस उपन्यास में भी ऐसे बहुत से लोग हैं जो महाजन बन कर शिवनाथ जैसे किसान का शोषण करते हैं। उपन्यास का शीर्षक 'महाजनी महात्म्य' पाठक की उत्सुकता एवं जिज्ञासा को प्रबल बना के रखता है। इस उपन्यास की सभी समस्याओं का आकलन इसके शीर्षक से ही पता चल जाता है। इस उपन्यास की सम्पूर्ण कथावस्तु शीर्षक के अनुकूल है।

'अकाल में उत्सव' शीर्षक नाम से ही दिलचस्प है। यह शीर्षक ही ऐसा है कि पाठक को अपनी और आकर्षित करता है। 'अकाल' एक भयावह स्थिति है। इसे भोगने वाला ही जानता है। अकाल मृत्यु से अधिक भयावह होता है। वैसे तो अकाल के अनेक रूप होते हैं। कहीं नैतिकता का अकाल है, कहीं ईमानदारी का अकाल है, कहीं पर यह अकाल मानसिक कष्ट देता है। लेकिन अन्न का अकाल मानसिक और शारीरिक दुःख देता है। उपन्यास का शीर्षक

'अकाल में उत्सव' कहानी के आधार पर सार्थक बैठता है। जहाँ एक तरफ किसानों की अकाल की स्थिति बनी हुई है तो दूसरी तरफ प्रशासन-जगत उत्सव में लगा हुआ है।

पंकज सुबीर ने पहले इस उपन्यास का नाम सूखा पानी गाँव को आधार बनाकर 'सूखा पानी' ही उपन्यास का नाम रखा था लेकिन कहीं न कहीं 'सूखा पानी' उपन्यास की कहानी के अनुरूप सटीक नहीं था। 'अकाल में उत्सव' चमत्कार करने वाला शीर्षक है। 'अकाल में उत्सव' शीर्षक रख के पंकज सुबीर ने पाठक को पढ़ने के लिए न केवल आमंत्रित किया। बल्कि पढ़ने को मजबूर कर दिया है। ऐसा ही शीर्षक है– 'अकाल में उत्सव' सुननें में ही विरोधाभासी शीर्षक लगता है। इसलिए पाठक पन्ने पलटे बिना रह ही नहीं सकतें, और अगर एक बार पन्ना पलट लिया तो उपन्यास की कहानी ऐसी है कि उपन्यास पूरा पढ़ें बिना नहीं रह सकेंगें।

उपन्यास का अकाल वाला भाग सुचिंतित है जबकि उत्सव वाला भाग विद्रूपता से भरा है। उत्सव वाला हिस्सा व्यंग्य की शैली में होने के बाद भी पाठक को अकाल वाला हिस्सा ही बांधता है, बांधे रखता है। 'अकाल में उत्सव' तथा इसके साथ आये कुछ उपन्यासों ने किसानों के जीवन पर लिखे जाने वाले उपन्यासों के अकाल को तोड़ा है। उपन्यास की शैली उसकी पठनीयता और रोचकता दोनों को बढ़ाती है। यह उपन्यास का सबसे सशक्त पहलू है कि लगभग ज्ञात अंत होने के बाद भी पाठक इस उपन्यास को पूरी उत्सुकता के साथ पढ़ता है। अपने आपको पढ़ा ले जाने वाला यह गुण शीर्षक को विशिष्ट बनाता है। पाठक को अकाल की उत्सुकता रहती है और उत्सव की भी। लेखक ने अकाल और उत्सव के बीच प्रेम की गुंजाइश को भी तलाशा है। यह प्रेम दैहिक न होकर आत्मिक है। समय से पूर्व अधेड़ हो चुके रामप्रसाद और कमला के बीच लेखक ने बहुत मध्दिम से प्रेम को बिना ऊँचा सुर लगाए बहुत सहजता के साथ लिखा है और इसी में रचा है एक प्रेम दृश्य भी। उपन्यास में पाठक को कमला के दुःख के

साथ अपने को जुड़ा हुआ महसूस करता है। अंत में आकर पाठक को एक बार फिर से वह सारे दृश्य याद आते हैं जो रामप्रसाद और कमला के बीच घटे हैं। इन दृश्यों को याद करतें ही पाठक से अन्दर की पीड़ा घनीभूत हो जाती है।

'अकाल में उत्सव' उपन्यास अपने नाम में ही दो विपरीत ध्वनियों को समेटे हुए हैं और वैसे ही संकेत उपन्यास के कवर पेज में भी मिलते हैं, जिसमें काले रंग से दबी हुई हरे रंग की एक लहर को पैरों में रौंदते हुए एक प्रेत छाया नाच रही है। इसमें काले रंग से दबी हुई हरी लहर है, वह अकाल है। और उस पर नाचती प्रेत छाया 'उत्सव' है। व्यवस्था का उत्सव। किसान और उसके जीवन के बिन्दु पर आकर यह दोनों समानांतर लकीरें एक-दूसरे को काटती हुई गुजर जाती है। न कोई प्रभाव उत्सव पर पड़ता है और न उत्सव का कोई असर अकाल पर। पंकज सुबीर ने किसानों को अकाल में परिवर्तित कर दिया है और सरकार को उत्सव में न सरकारों के जीवन से कभी उत्सव समाप्त होता है और न कभी किसानों के जीवन से अकाल। इस आधार पर उपन्यास को शीर्षक में सार्थकता स्थापित है।

'अकाल में उत्सव' में शीर्षक अथवा नामकरण मूल रामप्रसाद की संवेदना के साथ जुड़ा है। उपन्यास का केन्द्रीय विचार एवं कहानी उसके नाम अथवा 'अकाल में उत्सव' शीर्षक के साथ व्यंजित हो रही है। जो किसान रामप्रसाद और प्रशासन की दृष्टि से देखी और वर्णित की गई है इस आधार पर हम कह सकते हैं कि 'अकाल में उत्सव' शीर्षक उपन्यास की कहानी के आधार पर बिल्कुल सार्थक है।

3.4 शब्द-योजना:-

'महाजनी महात्म्य' और 'अकाल में उत्सव' में शब्द योजना और शिल्प विधान का उपयोग कलात्मक रूप में किया गया है। अन्नाराम सुदामा और पंकज सुबीर के शब्द भंडार व्यापक एवं समृध्द है। उन्होंनें अभिव्यंजना को सशक्त रूप देने वाले समस्त शब्दों का यथास्थान प्रयोग किया है। उन्होंने कृत्रिमता पूर्ण शब्द-योजना के साथ स्वाभाविक भाषा में प्रयोग किये जाने वाले शब्दों पर विश्वास किया है। दोनों ही उपन्यासों में शब्दों का चयन, पात्रों के अनुरूप होता है, जो पात्रों की छवि को इतना स्पष्ट कर देता है कि पाठक अगर चित्रकार हो तो वो उनके हाव-भाव और पहनावे तक को साफ़ चित्रित कर दें। दोनों ही उपन्यासों की पृष्ठभूमि ग्रामीण क्षेत्र को लेकर लिखी गयी है, तो इन उपन्यासों में ठेठ बोलचाल के शब्दों का प्रयोग अधिक हुआ है। 'महाजनी महात्म्य' में राजस्थानी शब्दों के प्रयोग देखने को मिलते हैं, वहीं 'अकाल में उत्सव' में मालवी भाषा के शब्द मिलते हैं।

3.4.1 प्रचलित तत्सम शब्दों के साथ हिन्दुस्तानी का सहजता से प्रयोग:-

'महाजनी महात्म्य' और 'अकाल में उत्सव' में पात्र बात करते समय बोलते तो सहज हिंदी ही हैं किन्तु कभी-कभी वे संस्कृत के प्रचलित तत्सम शब्द भी नि:संकोच कह जाते हैं। 'महाजनी महात्म्य' में पटवारी ने शिवनाथ से हंस कर कहता है– "मंत्री और बड़े-बड़े अफ़सर, कई डरते शुभराज की मुद्रा में खड़े थे। अपनी समझ में सारे हवाई-जहाज़ बने हुए थे।"[66] ऐसे हिंदुस्तानी के शब्द 'महाजनी महात्म्य' में देखने को मिलते हैं।

'अकाल में उत्सव' की रचना के समय तक पंकज सुबीर के पात्रों की भाषा संबंधी मत बदल चूका था। मुआवज़ा, मकरुज, मुआहदा, कर्जा जैसे दो-चार अरबी, फ़ारसी के शब्द लेखक ने प्रयुक्त कराये हैं।

---

[66]अन्नाराम सुदामा, महाजनी महात्म्य, पृ.सं. 78

3.4.2 अतिमनोरम, कवित्वपूर्ण, संस्कृत शब्दों का प्रयोग:-

'महाजनी महात्म्य' और 'अकाल में उत्सव' रचनाओं में कुछ शब्द ऐसे भी है। जिनमें संस्कृत शब्दों की प्रधानता है। ऐसे भाषा का प्रयोग तभी किया गया है। जहाँ कवियों की तरह भावमय होकर लेखक अपने विचार प्रकट करते हैं। उदहारण के लिए 'महाजनी महात्म्य' में कष्टमय शैली का यह स्थल दृष्टव्य हैं– "जजमान, आप मेरे हैं, आगे भी अपने दुःख-सुख की कही, आपने सुनी, मेरी घर वाली गुजरी, तब भी आपने भरसक मदद की मेरी। अहसान तो एक बार ही होता है; कोई माने तो ?... जजमान, छोरे के मेरे, औरत बड़ी निकम्मी आ लगी। नाता करवाकर एक अचींती आफ़त खड़ी कर ली मैंने। पैसों से भी ख़ाली हो गया और साख भी समाज में गिरी। कारण बस यही है- मेरे चुसने का।"[67] शुध्द साहित्यिकता की दृष्टि से पद्य-काव्य जैसा आनंद देने वाले ऐसे स्थल पाठकों को अत्यंत प्रिय है। इस प्रकार 'अकाल में उत्सव' में पंकज सुबीर ने बारिश आने के दृश्य को दिखाया हैं– "टप्प... आँगन में पहली बूंद गिरी। बूंद की आवाज ने उस छोटे से टूटे-फूटे मकान के अंदर दहशत भर दी। उस साधारण-सी आवाज में कितनी दहशत भरी थी। आवाज़े या दृश्य अपने आप में दहशत नहीं होते, वह स्थितियाँ, जिनमें वह पैदा हो रहे हैं, उनके साथ मिलकर वह दहशत पैदा करते हैं।"[68] अत: तत्सम शब्दों के बावजूद मनोभावों के प्रकट करने और रोचकता बनाये रखने के साथ-साथ संप्रेषणीयता की कोई समस्या ऐसे शब्दावलियों से नहीं उत्पन्न होती।

3.4.3 ठेठ और घरेलू शब्द का प्रयोग:-

[67]अन्नाराम सुदामा, महाजनी महात्म्य, पृ.सं. 9

[68]पंकज सुबीर, अकाल में उत्सव, पृ.सं. 181

'महाजनी महात्म्य' और 'अकाल में उत्सव' दोनों ही उपन्यासों में ग्रामीण जीवन का चित्रण है। दोनों उपन्यासों की भाषा में ठेठ ग्रामीण, अर्ध-तत्सम और तद्भव शब्दों की प्रधानता है। दोनों ही उपन्यासों में बोलचाल के लिए ठेठ घरेलू शब्द है जिससे भावों के आदान-प्रदान में बोझिलता नहीं आती बल्कि जीवन्तता आ जाती है। 'महाजनी महात्म्य' में ऐसे कुछ शब्द हैं– भुभल, बापड़ी(बेचारी), दरोंगो(चाकर), टटोलता, जांघिया, मतीरे, गीगे(नन्हे बच्चे), पटना(खोदना), खेजडे, धड़ा, फ़ोग, खेस, कुजिवों, आठुनो, उरे, उकडू आदि। इस उपन्यास में ठेठ भाषा के कुछ ऐसे शब्द भी आ गये हैं। जिनका अर्थ पता नहीं चलता। उनका अनुवाद करने में सामान्य पाठक को समस्या आती है।

इस क्रम में पंकज सुबीर ने 'अकाल में उत्सव' में ढेर सारे मालवी शब्दों के अर्थ सूचित किये हैं। इस किस्म के शब्दार्थ परोसने की जरुरत न रेणु के यहाँ थी, और न ही राही मासूम रजा के यहाँ थी। इस उपन्यास में कई ठेठ स्थानीय शब्द अपने आप में विलक्षणता प्रदर्शित करते हैं चुरमना, जानपाड़ा, छर्रा, धोक जैसे शब्द अपनी प्रयोगवत्ता में ही अर्थ बतलाते हैं। मोहन राठी पात्र कहावतों के जादूगर की तरह इस उपन्यास में अनवरत कहावतों का रोचक और सार्थक उपयोग करते हैं।

3.4.4 अंग्रेजी के सहज शब्दों का प्रयोग:-

अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग शिक्षित और अशिक्षित दोनों ही पात्रों द्वारा अन्नाराम सुदामा और पंकज सुबीर के उपन्यासों में सर्वत्र पाया गया है। दोनों उपन्यासों के आम पात्रों की बोलचाल में देशज शब्दों के अलावा अंग्रेजी के सहज शब्द भी प्रयोग में इस प्रकार आये है कि वे स्वाभाविक से प्रतीत होते हैं। श्रोता को प्रतीत नहीं होता वह अंग्रेजी शब्द बोल रहा या सुन रहा है। लेखकों ने आप्तवचन कहतें हुए स्वंय भी उन्हें अपनाया है। शिक्षित पात्रों की बातचीत में

अंग्रेजी के कुछ ज्यादा शब्द प्रयुक्त होते हैं। इसलिए दोनों ही उपन्यासकारों ने संम्प्रेषणीयता को ध्यान में रखते हुए अंग्रेजी के सहज शब्दों का अनुपम प्रयोग किया है। इस प्रकार 'महाजनी महात्म्य' में कतारिया मैडम बातचीत करते समय आके, चान्स, गेम, पोजीशन, जैसे अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग करती है। वहीं 'अकाल में उत्सव' में कलेक्टर श्रीराम परिहार, राकेश चौरसिया, मोहन राठी आदि लोग बातचीत में अंग्रेजी शब्दों का बहुत प्रयोग करते हैं।

3.4.5 सहयोगी-शब्दों का प्रयोग:-

इन दोनों ही उपन्यासकारों के पास सहयोगी शब्दों का भंडार है। इनके प्रयोग से भाषा की स्वाभाविकता के साथ-साथ उसकी व्यंजना शक्ति को विशेष क्षमता प्रदान की है। ये सहयोगी शब्द दो प्रकार के हैं– ठेठ शब्द और साहित्यिक शब्द। प्रथम से आशय उन सहयोगी शब्दों से जो, ग्रामीण जनता के साथ-साथ नागरिक, जन साधारण में भी प्रचलित है। ऐसे कुछ शब्द जो इन दोनों उपन्यासों में प्रयुक्त हुए हैं जो इस प्रकार है– दांव-घात, अन्न-पानी, ताक-झांक, मोठ-बाजरी, छोरे-छोरियां, बात-वात, बिखरा-अधबिखरा, लेन-देन, खीर-पूरी, चहल-पहल, दवा-दारू , लेना-देना, चना-चबेला, लाग-डांट, गाजा-बाजा, बैल-बहिनया, पोती-पत्रा आदि। दूसरे प्रकार के सहयोगी शब्द शिक्षित नागरिक पात्रों में ही प्रचलित किया जिनका प्रयोग जनता तद्भव रूप में कभी-कभार ही लेती हैं। ऐसे शब्दों का भी प्रयोग इन उपन्यासों में हुए हैं। ऐसे कुछ शब्द हैं- घात-प्रतिघात, मान-मर्यादा, सेवा-सत्कार आदि।

उपर्युक्त सभी ध्वनिगत शब्दों का प्रयोग उपन्यास में वातावरण में हो रही चहल-पहल का सन्देश देते हैं। वातावरण की सजीवता को सचेत रखने हेतु ही अन्नाराम सुदामा और पंकज सुबीर ने इन शब्दों का प्रयोग किया है। उपर्युक्त सभी ध्वनिगत शब्द उपन्यासों में सहज रूप से ही घुलमिल गये हैं। कहीं पर भी ऐसा महसूस नहीं होता की लेखकों ने इन शब्दों को जबरदस्ती से

वाक्य में रख दिये हैं। इस दृष्टि से देखा जाये तो हम कह सकते हैं कि 'महाजनी महात्म्य' और 'अकाल में उत्सव' में किये गये ध्वनिगत शब्दों का प्रयोग सफल रूप से हुआ है।

3.5 संवाद-योजना:-

पात्रों के परस्पर वार्तालाप को संवाद योजना या कथोपकथन कहते हैं। उपन्यास में लेखक अपनी ओर से बहुत कुछ कह सकता है। मगर यदि वह पात्रों के मुख से वार्तालाप करता है, तो उपन्यास अधिक सजीव बनता है। वैसे संवाद उद्देश्य पूर्ण होना चाहिए। संवादों के गुणों की दृष्टि से उसमें होना आवश्यक होता है। संवादों की भाषा भी गुणों की अपेक्षा रखती हैं– स्वाभाविकता और पात्रानुकूलता 'महाजनी महात्म्य' और 'अकाल में उत्सव' में अन्नाराम सुदामा और पंकज सुबीर ने संवादों का प्रचुर प्रयोग किया है। संवादों में अपेक्षित गुणों तथा उनके उद्देश्यों की दृष्टि से 'महाजनी महात्म्य' और 'अकाल में उत्सव' में संवाद योजना कहाँ तक सफल बन पड़ी है, इसका मूल्यांकन यहाँ किया जा रहा है।

'महाजनी महात्म्य' की संवाद-योजना अत्यंत स्वाभाविक एवम् जीवंत है। जो कथा में प्राण डाल देती है। ज्यादातर संवाद सहज और सरल है। व्यवस्था के निर्मम चेहरे को रुचिकर तरीक़े से पेश किया है और आज के हालात में तो यह और समीचीन हो गया है। उदहारण के लिए एक युवक से आटे के पीपे के बारे में शिवनाथ चलते-चलते ही पूछ लिया, "चून आजकल घर पर नहीं पिसती माँ?"

"पटवारीजी का है यह।" उसका उत्तर था।

"कितना है ?"

"पांच किलो। "

"कितने पैसे दिए पांच किलो के ?"

"कुछ भी नहीं। "

"कुछ भी नहीं क्यों ?"

"कभी नहीं देते। वो ग्रामसेवक भी नहीं देता।"...

"वे तुम्हें तो कुछ देते ही होंगें ?"

"मुझे देते हैं शबासी। मैं कभी देर-सवेर जाऊं, तो मास्टरों को वे मेरी सिफारिश कर देते हैं।"

"कैसी सिफारिश ?"

"यही की इसे धमकाना मत।"[69]

इस प्रकार छोटे-छोटे सरल वाक्यों के द्वारा एक ओर रोचक संवाद-योजना की गयी। तो दूसरी और व्यंग्यात्मक रूप से शोषण वर्ग का अन्याय प्रस्तुत किया गया है।

अन्नाराम सुदामा के कहीं-कहीं संवाद बड़े चुस्त व संक्षिप्त भावों की अभिव्यक्ति करने में सक्षम है। धनजी सेठ के बारे में सुगनी बाई और डोकरी कहती है –"शक्ति और स्वास्थ्य जब तक काम देते रहें किसी के, तब तक खाल खींचने में कमी ये रखते नहीं और ढाँचा उतर देने लग जाए तब दूध की मक्खी की तरह निकाल बाहर करने से ये चूकते नहीं।"[70]

[69]अन्नाराम सुदामा, महाजनी महात्म्य, पृ.सं. 37
[70]अन्नाराम सुदामा, महाजनी महात्म्य, पृ.सं. 107

अन्नाराम सुदामा ने शब्दावली भी पात्रों के अनुरूप रखी है। ग्रामीण पात्रों से ग्राम्य-भाषा का प्रयोग कराया है वहीं शहरी पात्रों का शहरी भाषा में। इनकी भाषा सदा पात्रों के अनुरूप है। अन्नाराम सुदामा ने बड़ी कुशलता से संवादों द्वारा कथानक से संबंध बनाए रखा है। 'महाजनी महात्म्य' में घटनाएँ प्राय: व्यवधान के साथ होती है। वह व्यवधान देशकाल का होता है। एक घटना यदि एक स्थान और साथ ही कथा-प्रवाह के व्यवधान को दूर करना लेखक के लिए आवश्यक है। इसके बिना घटनाएँ पृथक-पृथक दिखाई देती हैं। 'महाजनी महात्म्य' में अन्नाराम सुदामा ने शिवनाथ के खेत से आते समय पीथा नायक के मिलने का दृश्य दिखाया है। शिवनाथ बैलों के प्रति दया-दृष्टि दिखाते हैं–

> "शिवनाथ के मुंह से निकला, "कौन है रे ?"
>
> "यह तो मैं पीथा नायक-कौन, शिवनाथराम ?"
>
> "हाँ और कौन।"
>
> "तो आओ, बैठो गाडे पर।"
>
> "नहीं रे, इस सवारी से तो पैदल जल्दी पहुंचूंगा, बूढ़ा बैल, बेचारे को नाहक भार क्यों मारुँ ?"[71]

इसी तरह कहीं-कहीं लंबें संवादों की योजना भी 'महाजनी महात्म्य' में हुई है। एक प्रसंग में शिवनाथ ईसर को समझाते हुए कहता है– "तो ईसर, तुम्हारे अन्त:करण में ऐसी ही कोई फाँस है कि अरे, मैंने यह क्या कर डाला, तो तू निकाल दे उसे और फेंक दे उस बेकार कचरे को अपने

[71] अन्नाराम सुदामा, महाजनी महात्म्य, पृ.सं 12-13

मजबूत मन के हाथ से। धरती माँ की सौगंध खाकर कह रहा हूँ मैं तुम्हें, मुझे इसका कहीं कोई दर्द नहीं। इस समय हम सत्य, सेवा और समता की सुगम धरती पर सोए हैं- वह हमारी साक्षी है।"[72]

अन्नाराम सुदामा ने 'महाजनी महात्म्य' में पात्रानुकूलता का बहुत ध्यान रखा है। जैसी भाषा का प्रयोग कतारिया या मंत्री करते हैं। उसके विपरीत (गाँव की भाषा) पात्रों को स्वाभाविक बनाये हैं। तभी प्रभाव की दृष्टि संभव हो सकी है, साथ ही संवाद, पात्रों के चरित्र-चित्रण के विकास में सहायक हुए हैं। आजकल मनोवैज्ञानिक के समावेश को भी स्वाभाविकता की शर्त माना जाता है। पात्रों की मनोदशा के अनुकूल जो संवाद हो, वही स्वाभाविक है। इसके साथ ही मार्मिकता और रोचकता ने उपन्यास के प्रभाव और रोचकता को बढ़ाया है। पात्रों के संवाद कथा-विकास में उपर्युक्त वातावरण की सृष्टि करते हैं। विशेषकर प्रेम-प्रसंगों में संवादों का बड़ा महत्त्व है। क्योंकि पात्रों के वार्तालाप से ही प्रेम के मधुर वातावरण की सृष्टि होती हैं।

उपन्यास में विश्वस्त पात्रों के माध्यम से अन्नाराम सुदामा अपने दृष्टिकोण से संबंधित अनेक उदाहरणों पर न जाकर एक विशेष उदाहरण ही देना उपर्युक्त होगा। शिवनाथ पीथा नायक से धनजी सेठ द्वारा दिए गये शोषण के बारे में जाना, फिर शिवनाथ मन ही मन सोचता है– "भोला आदमी अच्छा पड़ा लछमी-पुत्र के पाले। भेड़ को कोई समझाए भी तो कैसे, उसे तो ऊन भी कटानी और देह भी। महीने में चार रुपये का गुड और दो रुपये की चायपत्ती बस, पर यह नहीं सोचता कि करेगा तो खरबूजा ही, चाकू का क्या गया ? फिर सोचा, सौदा है, यह तो। लाचारी और कमज़ोरी का लाभ दुनिया उठाती आई है, पर इसे यह पता नहीं कि इतने से ही डकार थोड़े ही आ जाएगी, उस लछमी-पुत्र को ? अनाज, घास, चारा और पाला; वे भी, तो इसी चाकू की

[72]अन्नाराम सुदामा, महाजनी महात्म्य, पृ.सं. 127

धार तले होंगे। मोल में औरों से दो रूपए सस्ता और तोल में झुकता-यह तो आम है।"[73] इस प्रकार 'महाजनी महात्म्य' संवाद-योजना की दृष्टि से अत्यंत सफल उपन्यास बन पड़ा है। इसकी संवाद-योजना, कला-कौशल की परिचायक है।

'अकाल में उत्सव' उपन्यास में जितना महत्त्व कथा एवम् पात्रों का है, उतना ही संवादों का है। संवादों के द्वारा पात्रों का चरित्रांकन प्रत्यक्ष जान नहीं पड़ता है। किसी भी पात्र की विशेषता या कमजोरी अन्य पात्रों की बातचीत या व्यंग्य द्वारा व्यक्त करते हैं। यह सब संवाद द्वारा ही संभव होता है। इस उपन्यास के संवादों का संबंध पात्रों के चरित्र-चित्रण एवं कथावस्तु से जुड़ा है। 'अकाल में उत्सव' में किसानों के संवाद में स्थानीय बोली का बेहतर इस्तेमाल किया गया है। ज्यादातर संवाद सहज और सरल है। एक संवाद में रामप्रसाद और कमला के तोड़ी गिरवी रखने के संबंध में रामप्रसाद कमला से कहता है- "अने फिर नंगी-बूची फिरेगी के कंइ ? रकम के नाम पे तोड़ी तो बची है, उके भी ठिकाना लगइ दे।'... 'ठिकाना लगाने कि कौन के र् यो है। म्हारो तो यो केनो है कि अभी सुनार के पास गिरवी धर दो...।"[74] इस प्रकार सामान्य सरल बोलचाल की भाषा में पात्रों से बात करवाते हैं। सरल भाषा में रामप्रसाद और कमला के दुःख को दिखाया गया है। वहीं प्रशासन के प्रसंग को पंकज सुबीर ने व्यंग्यात्मक रूप से दिखाया है- "सरकारी व्यवस्था शेर के शिकार करने समान होती है। जब शेर अपने शिकार से पेट भर खा लेता है, तो बाकी का शिकार अपने से छोटे जानवरों, मतलब गीदड़ों आदि के लिए छोड़ देते हैं।"[75] उपन्यास के कई हिस्से में संवाद-योजना बहुत मार्मिक, कई-कई जगह आंसुओं के सैलाब उमड़ता है। कभी आंसू बह जाते हैं, और कभी आँख, नाक और गले को गमगीन करते रहते हैं।

[73] अन्नाराम सुदामा, महाजनी महात्म्य, पृ.सं. 13
[74] पंकज सुबीर, अकाल में उत्सव, पृ.सं. 22
[75] पंकज सुबीर, अकाल में उत्सव, पृ.सं. 15

ख़ासतौर पर कमला का तोड़ी उतार के देना और रामप्रसाद का उसे बेचने ले जाना– "अने डूब जाय तो डूब जाय, म्हारे से तो नी पेनी जाए इत्ती मोटी-मोटी तोड़ी। हड्डी में लग जाए तो दरद करे है। तम तो यो करजो कि उठाते बने तो उठा लीजो और जो नी उठाते बने, तो तोड़ी कटवा के, सुनार को हिसाब करके म्हारे लिए झालर (पायजेब) ला दीजो।"[76]

"अबार (इस बार) तो गंउ भी भोत अच्छो जमो है। और एक महीनो ठीक से निकल गयो तो ख़ूब अच्छी हीटेगी (निकलेगी) फसल।"[77] रामप्रसाद सुनार की दुकान पर उस जेवर को गलते हुए वह महसूस करता है कि जैसे रामप्रसाद की जिंदगी भर का संचित निश्चल स्नेह पिघलकर अब मात्र एक धातु के टुकड़े में बदल गया है।

इस उपन्यास में छोटे-संवाद कम देखने को मिलते हैं। ज्यादातर संवाद लंबे ही हैं। चाहे रामप्रसाद और कमला का हो, या प्रशासन का। दोनों उपन्यासों में लंबे संवाद ही देखने को मिलते हैं।

3.6 देशकाल और वातावरण:-

देशकाल या वातावरण का चित्रण उपन्यास की वास्तविकता में वृध्दि करता है। मनुष्य बहुधा देशकाल की उपज होता है, अथार्थ मानव जिस समाज में जीता है उस समाज के रीति-रिवाज विचार, प्रसंग आदि को वह उसकी संस्कृति के साथ सहज ही आजमा लेता है और उसे अपनाता भी है। बाबू गुलाब राय के शब्दों में- "व्यक्ति के निर्माण में वातावरण का बहुत कुछ हाथ होता है। जिस प्रकार बिना देशकाल के पात्रों का व्यक्तित्व भी स्पष्ट नहीं होता है और घटना क्रम को समझने के लिए भी इसकी आवश्कता होती है। आजकल बढ़े हुए वस्तुवाद के समय

---

[76]पंकज सुबीर, अकाल में उत्सव, पृ.सं. 23
[77]पंकज सुबीर, अकाल में उत्सव, पृ.सं. 23

देशकाल का महत्त्व और भी बढ़ गया है।”[78] हिंदी में आंचलिक उपन्यासों के लिए तो देशकाल या वातावरण मानों प्राण तत्व ही है। वातावरण के उपर्युक्त चित्रण के लिए देश (स्थल) एवं काल (समय) का सम्यक् ज्ञान आवश्यक है।

‘महाजनी महात्म्य’ और ‘अकाल में उत्सव’ का देशकाल अपने युग का ही प्रतिबिम्ब है। इनका देशकाल राजनीतिक जीवन नहीं अपितु कृषक और उसके ग्रामीण जीवन से संबंधित है। कृषक और उसके ग्रामीण जीवन की लगभाग सभी परिस्थितियों का यथार्थ एवं स्पष्ट चित्रण इन दोनों ही उपन्यासों में मिल जाता है। इन दोनों उपन्यासों में देशकाल का जो चित्रण हुआ है वह इन दोनों ही रचना के पूर्व भी सत्य था, रचना-काल में भी सत्य था और रचनाकाल के पश्चात भी अनेक वर्षों तक सत्य बना रहेगा। पहले हरित-क्रांति फिर बाद में वैज्ञानिक विकास के कारण कृषि-विज्ञान के क्षेत्र में भी निरंतर नये-नये आविष्कार हो रहे हैं तथा समाज भी अपनी जड़ता से धीरे-धीरे मुक्त हो रहा है। फिर क्यों ? आज भी किसानों की स्थिति बद-से-बदतर होती जा रही है। आज खासकर समृध्द राज्यों में किसान आत्महत्या करने को मजबूर है। इस प्रकार इन दोनों उपन्यासों में किसान की स्थिति से उजागर कराया गया है। ‘महाजनी महात्म्य’ और ‘अकाल में उत्सव’ दोनों उपन्यासों का देशकाल त्रिकालस्पर्शी है, जो इसकी बहुत बड़ी विशेषता है। वास्तव में ‘अकाल में उत्सव’ और ‘महाजनी महात्म्य’ का देशकाल भारतीय गाँवों का चित्र है। इन दोनों उपन्यासों में ग्राम्य-जीवन का सम्पूर्ण एवं यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया गया है। अत: इनका देशकाल सीमित नहीं, अपितु व्यापक है।

3.7 पात्र और चरित्र-चित्रण:-

[78]बाबू गुलाबराय, काव्य के रूप, पृ.सं. 177

उपन्यास किसी व्यक्ति विशेष की कृति होता है। वह व्यक्ति ही उपन्यास में पात्र या चरित्र कहलाता है। कथानक की भांति पात्रों का भी उपन्यास में अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान होता है। पाठक किसी भी उपन्यास के कथानक को एकाध-बार पढ़कर भूल सकता है। लेकिन उनके पात्र, उनके गुण एवं व्यक्तित्व को नहीं भूल सकता। मुंशी प्रेमचंद के उपन्यास समग्र साहित्य जगत में आज इसलिए लोकप्रिय एवं ख्याति प्राप्त हैं क्योंकि उन्होंने अपने उपन्यासों के पात्र तथा उनके चरित्र-चित्रण में विशेष ध्यान रखा था। वे स्वंय भी यही कहते थे "मैं उपन्यास मानव जीवन का चित्र मात्र समझता हूँ। मानव चरित्र पर प्रकाश डालना और उसके रहस्यों को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्व है। उपन्यासकार पात्रों के माध्यम से ही जीवन के यथार्थ को प्रस्तुत करता है। अत: वे पात्र हमारे नजदीक या आसपास की दुनिया के ही लगते हैं। इसके लिए यह आवश्यक है कि उपन्यास के पात्र भी सजीव स्वाभाविक एवं सहज हो, वे तो अलौकिक हो न असामान्य।

'महाजनी महात्म्य' उपन्यास के माध्यम से 'अन्नाराम सुदामा' जी ने समाज में व्याप्त बुराइयों और समस्याओं का वर्णन हमारे समक्ष प्रस्तुत किया है। 'महाजनी महात्म्य' के सभी पात्रों की और ध्यान आकर्षित करने वाली विशेष बातों से अवगत कराया है। और सभी पात्रों का सफलतापूर्वक चरित्र-चित्रण भी किया है। कथानक की भांति पात्रों का भी इस उपन्यास में महत्त्वपूर्ण स्थान है। इस उपन्यास में दो प्रकार के पात्र है। 1.प्रधान पात्र और 2.गौण पात्र। कथानक के बाद पात्रों के चरित्र–चित्रण को उपन्यास का दूसरा प्रधान तत्व माना हैं। 'महाजनी महात्म्य' का प्रधान पात्र शिवनाथ राजस्थान के एक ग्राम जीवनसर का छोटी जोत का किसान है। अन्नाराम सुदामा जी ने शिवनाथ के रूप में एक अमर पात्र की सृष्टि की है। जो भारतीय कृषक वर्ग का प्रतिनिधत्व करता है। शिवनाथ के चरित्र में उपलब्ध दो गुण है उनके विचार और परिश्रम

करते रहने की दृढ़ इछाशक्ति वास्तव में अन्नाराम सुदामा के व्यक्तित्व से मेल खाती है। इसी प्रकार शिवनाथ के माध्यम से अपने विचारों को इस प्रकार उपन्यास में अभिव्यक्त किया है। शिवनाथ को अपने जीवन में प्राय: उन्हीं समस्याओं से जूझना पड़ा जो एक सामान्य भारतीय कृषक वर्ग के जीवन में रहती है। शिवनाथ निहायत, ईमानदार, परोपकारी एवं क्रांतिकारी कृषक है। आर्थिक अभाव में ग्रस्त किसानों के कर्ज़ एवं ऋणग्रस्तता के प्रति क्रांतिकारी कदम उठाते नज़र आता है। शिवनाथ के माध्यम से अन्नाराम सुदामा जी ने शोषण के शिकार हो रहे लोगों को शोषण के प्रति प्रतिरोध को उत्पन्न किया है।

पंकज सुबीर ने 'अकाल में उत्सव' के सभी पात्रों की ओर ध्यान आकर्षित करने वाली विशेष बातों से अवगत कराया है। पंकज सुबीर ने 'अकाल में उत्सव' के सभी पात्रों का सफलतापूर्वक चरित्र-चित्रण किया है। कथानक की भांति पात्रों का भी इस उपन्यास में महत्त्वपूर्ण स्थान है। इस उपन्यास में भी दो प्रकार के पात्र हैं। 1.प्रधान पात्र और 2.गौण पात्र। 'अकाल में उत्सव' में प्रधान पात्र में रामप्रसाद और कमला का चित्रण है। वहीं गौण पात्र में उपन्यास के अन्य प्रशासनिक लोग है। उनमें राकेश पांडेय, मोहन राठी तथा श्रीराम परिहार जैसे लोग हैं। 'अकाल में उत्सव' में राम नाम के दो पात्र हैं एक है- जिला अधिकारी श्रीराम परिहार और दुसरे गरीब रामप्रसाद। इसमें आदि से अंत तक रामप्रसाद की दयनीय और संघर्ष पूर्ण गाथा कही गई है। वह भारतीय कृषक वर्ग का प्रतिनिधि है, जो सदैव शोषक वर्ग के हाथों यातना सहने को मजबूर है।

रामप्रसाद परिवार का मुखिया है। उसके पास दो एकड़ जमीन है। उसके परिवार में दो बेटे हैं, भाई भागीरथ , तीन बहनें तथा पत्नी कमला है। वह कमर तोड़ मेहनत करके फसल उपजाता है। फिर भी उससे दो वक्त की रोटी नसीब नहीं होती है। रामप्रसाद रोजमर्रा के जीवन की

छोटी से छोटी जरूरत को पूरा करने के लिए घिसट रहे हैं। उनकी गुहार पर ऊपर आसमान में विराज रहें राम भी अनसुनी कर देते हैं। जिस फसल पर उनके और उनके परिवार की जिंदगी होना टिका है, कई महत्त्वपूर्ण घरेलू कार्यों का पूर्ण होना टिका है, उसे बर्बाद होने से बचाने के लिए रामप्रसाद पूरा प्रयास करता है। बारिश और ओलावृष्टि से फ़सल को बचाने के लिए रामप्रसाद की पत्नी सभी देवी-देवताओं से गुहार लगाती है पर उसकी फरियाद सुन ही नहीं पाते हैं और गरीबों को और अधिक बर्बाद और फटेहाल होने के लिए छोड़ देते हैं।

रामप्रसाद भी अत्यंत दरिद्र होते हुए भी नैसर्गिक मानवीय भावनाएं रखता हैं, वह अपने दुःख की परछाइयों से अपने बच्चों को दूर ही रखना चाहता है। और अपनी पत्नी को खुश देखना चाहता है। किन्तु इस सब में असफ़ल रहने पर वो आत्महत्या का बहुत खतरनाक रास्ता चुनता है। उपन्यास में रामप्रसाद की स्थिति का वर्णन लेखक ने इतना सजीव किया है कि उसके इस फैसले के सिवाय एक बार तो पाठक को भी कोई दूसरा चारा दिखाई नहीं देता।

'अकाल में उत्सव' की एक और मौलिक और महत्त्वपूर्ण विशेषता है- रामप्रसाद और उसकी पत्नी आदि, ग्रामीण पात्रों के वार्तालाप में आंचलिक भाषा मालवी का बढ़िया प्रयोग। मालवी भाषा में जो लालित्य, मधुरता और अपनापन है वह उपन्यास के ग्रामीण पात्रों के संवादों को जीवंत बना देता है। ग्रामीण पात्रों द्वारा बढ़िया मालवी भाषा के प्रयोग ने उपन्यास की गुणवत्ता कई गुना बढ़ा देता है। यहीं विशेषता इस विषय पर आये अन्य उपन्यासों को अलहदा किस्म की रचना सिद्ध करती है।

इस उपन्यास का एक प्रमुख पात्र मोहन राठी है जो प्रशासन का चाटुकार है। बेहतरीन मनोवैज्ञानिक है, अवसरवादी है और बेहतरीन वक्ता भी है। उसकी खासियत यह है कि वह अपनी बात मुहावरों से ही शुरू करता है और पाठक को उपन्यास के प्रति रोचक बनाता है। पूरी

कहानी दोनों पाटों की अपनी-अपनी सोच है और उसे परिष्कृत करते रहना उसकी नियति सरकारी बाबूओं ने जहाँ भौतिक चाह को ही बढ़ावा देना शाश्वत नियम मान लिया, वहीं किसान रामप्रसाद परम्परा के अंत को सोच जीवन को घसीटने में अव्वल है। मज़बूरी ने कई परिभाषाएं को उजागर करता रहा। इस उपन्यास के गौण पात्र कथावस्तु को गति प्रदान करने और प्रधान पात्रों का चरित्र स्पष्ट करने में सफल हुई है। इस प्रकार चरित्र विकास की दृष्टि से उपन्यास के पात्र स्थिर एवं गतिशील दोनों प्रकार के है। पात्रों की भाषा-संवाद और उनकी मनोदशा पाठकों को इस उपन्यास से अंत तक जुड़ें रखने के लिए बाध्य करती है।

दोनों ही उपन्यासों में चरित्रों का चित्रण वर्णात्मक, विश्लेषणात्मक और नाटकीय शैली में हुआ है। उपन्यासों में चरित्र-चरिण इस प्रकार से चित्रित है कि इनमें पूर्ण स्वाभाविकता लक्षित है। तथा पाठक उनके साथ आत्मसात हो सके हैं। चरित्र-चित्रण में कलात्मकता, घटनात्मकता तथा बौद्धिकता आदि विशेषताएँ पायी गयी हैं।

3.8 उद्देश्य:-

प्रत्येक रचाना का कोई न कोई उद्देश्य अवश्य होता है। बिना उद्देश्य के तो किसी रचना की कल्पना भी नहीं की जा सकती। अन्नाराम सुदामा और पंकज सुबीर सच्चे साहित्यकार है। दोनों ही उपन्यासकार, उपन्यास के माध्यम से निंजी अनुभूतियों को अभिव्यक्ति प्रदान करने वाले कलाकार हैं। 'महाजनी महात्म्य' और 'अकाल में उत्सव' सोद्देश्य उपन्यास हैं, जिसमें अनेक संदेश निहित हैं। दोनों ही उपन्यासों के नायक शिवनाथ और रामप्रसाद लेखकों का अनुभूति-पक्ष है। दोनों ही लेखक विचारों की दृष्टि से आदर्शवादी हैं। जिस कारण उनके पात्र परिपूर्ण परिलक्षित होते हैं। जिससे उनको पीड़ा या कष्टों को सहन करना पड़ता है। दोनों ही उपन्यास के नायक शिवनाथ व रामप्रसाद परम्परावादी रूढ़ियों, मान्यताओं, संस्कारों व आदर्शों से युक्त होकर

अपना शोषण स्वीकार करते हैं। रामप्रसाद की मृत्यु इन्हीं आदर्शों के कारण होती है। धार्मिक भावना के कारण वह इतने भयभीत रहते हैं कि प्रत्येक अन्याय को सहन करते हैं परन्तु उसके विरुद्ध आवाज नहीं उठाते। पंकज सुबीर स्वयं आवाज उठाते हुए मानो कहते हैं– कानून और न्याय उसका है, जिसके पास पैसा है। कानून तो यह है कि कोई महाजन किसी आसामी के साथ लड़ाई न करे, कोई जमींदार किसी काश्तकार के साथ सख्ती बंधवाकर न करें, मगर होता क्या है ? जमींदार मुस्क बंधवाकर दिखता है और महाजन लात और जुते से बात करता है। कचहरी अदालत उन्हीं के साथ हैं जिसके पास पैसा है। इस प्रकार अन्नाराम सुदामा और पंकज सुबीर ने यह सन्देश दिया है कि इस प्रकार का शोषण देश और समाज के लिए घातक है।

दूसरी और पंकज सुबीर ने कथा में कमला जैसे पात्र के द्वारा यह सिद्ध किया है कि नारी-जीवन एक आदर्श, त्याग और सेवा से युक्त महान था। महत्त्वपूर्ण था यदि वह नैसर्गिक गुणों का परित्याग कर पुरुष बनना चाहती है। या पुरुषों के गुणों को प्राप्त करना चाहती है, तो वह कुल्टा बन जाती है। पंकज सुबीर नारियों को या पुरुषों को बराबर का स्थान प्रदान करने के पक्षपाती नहीं थे। जहाँ नारी में मत, त्याग, सेवा दया आदि भाव है। इसी कारण पंकज सुबीर ने कमला को नारी माना है। नारी के लिए त्याग ही सबसे बड़ा बलिदान है। कमला के आदर्शों और उनके महान विचारों को जानकर ही रामप्रसाद का जीवन बलिदान खो जाता है। कमला में अब वासनात्मक प्रेम नहीं बल्कि सेवा और त्याग संबंधी प्रेम है।

इस प्रकार अन्नाराम सुदामा और पंकज सुबीर ने शिवनाथ, ईश्वर, पद्मा, मास्टरजी, रामप्रसाद, कमला, मोहन राठी, श्रीराम परिहार, जैसे पात्रों को मुख्य रूप से महान और हितकारी संदेशों का संकेत किये हैं। जिस कारण उनके यह 'महाजनी महात्म्य' और 'अकाल में उत्सव' अनुपम एवं श्रेष्ठ रचनाएँ हैं। यथार्थ कथानक जीवंत और युगानुरूप पात्र योजना, तत्कालीन

वातावरण आदि सभी दोनों उपन्यासों की गरिमा को अधिक महत्त्व प्रदान करते हैं। अत: कह सकते हैं कि 'महाजनी महात्म्य' और'अकाल में उत्सव' हिंदी साहित्य के अनुपम उपन्यास है।

उपसंहार

भारतीय परिदृश्य में किसानों को लेकर कभी भी अच्छी स्थिति देखने को नहीं मिलती लेकिन मध्यकाल में कुछ कवियों ने खेती या किसानी को सबसे उत्तम व्यवसाय के रूप में अभिव्यक्त किया है। व्यापार को दूसरा दर्जा दिया है। चाकरी या नौकरी को सबसे अधम बताया गया है। इसका कारण संभवतः स्वाधीन रूप से किसान-जीवन का होना निश्चित है। इस किसानी को सामंतवाद की नज़र सर्वप्रथम लगी। इस व्यवस्था में ही किसान के शोषण की बदहाली को कवियों ने विशेषकर मध्यकालीन भक्त कवियों ने चित्रित किया है। किसान का शोषण राजतंत्र और सामंतवाद से होते हुए आधुनिक पूंजीवादी व्यवस्था का वास्तविक यथार्थ भी है। किसानों पर बढ़ते भूमि करों के दबाव ने उनकी रीढ़ की हड्डी तोड़ दी। आधुनिक काल में किसान, मजदूर बनने को अभिशप्त हुआ। 'गोदान' का होरी और गोबर इसकी बानगी के प्रतीक हैं। आधुनिक उद्योग आधारित व्यवस्था में सेवा-क्षेत्र का विस्तार हुआ और उत्पादन आधारित अर्थव्यवस्था का परिवेश सिकुड़ा। छोटी और मझोली जोत के किसान पर इस व्यवस्था की सर्वाधिक मार पड़ी। इन सब परिस्थितियों के बीच संवेदनशील रचनाकार कैसे इन से अछूता रह सकता था ?

आजादी के बाद के भारतीय परिदृश्य में किसान और युवा वर्ग सर्वाधिक उत्पीड़ित हुए हैं। इनको भारत की विभिन्न भाषाओं के साहित्यकारों ने अपनी रचनात्मक चिंताओं का हिस्सा बनाया है। इसी कड़ी में राजस्थानी और हिंदी के वरिष्ठतम साहित्यकार, साहित्य अकादेमी पुरस्कृत अन्नाराम सुदामा आते हैं। इनके लेखन की शुरूआत साठ के दशक से हुई। इन्होंने विभिन्न विधाओं में अपने लेखन का लोहा मनवाया। पेशे से अध्यापक और मिजाज़ से साहित्यिक व्यक्तित्त्व के धनी अन्नाराम सुदामा ने मातृभाषा की बगिया से राजभाषा हिंदी के पथ

को समृद्ध किया । राजस्थान की साहित्य नगरी बीकानेर इनकी रचनास्थली रहा है । इन्होंने ग्रामीण पृष्ठभूमि को ध्यान में रख कर किसान की सुध ली है। परम्परागत राजस्थान के साहित्य में राजा, रजवाड़ा, सामंत और जागीरदार साहित्य के केंद्र में थे। इसको बदलने का काम विजयदान देथा उर्फ़ बिज्जी के समानधर्मा अन्नाराम सुदामा भी कर रहे थे। इन्होंने 'साहित्यकारों के तीर्थ को सह-अस्तित्व' से जोड़ा है। राजस्थान के आधुनिक-गद्य की परंपरा में इन्होंने अनेक रचनाएँ प्रदान की हैं जिनमें से कुछ प्रमुख निम्नलिखित हैं- 'मैकती काया : मुस्काती धरती', 'घर संसार', 'अचूक इलाज', 'मैवे रा रुंख' ('महाजनी महात्म्य') । प्रस्तुत लघु-शोध का विवेच्य उपन्यास 'महाजनी महात्म्य' है। यह उपन्यास राजस्थानी भाषा में सन् 1977 में प्रकाशित हुआ, जिसे सन् 1978 में केन्द्रीय साहित्य अकादेमी का पुरस्कार राजस्थानी भाषा और साहित्य के लिए प्रदान किया गया। इस मूल रचना का हिंदी अनुवाद स्वयं उपन्यासकार ने किया है जो वर्ष 2007 को साहित्य अकादेमी, दिल्ली से प्रकाशित हुआ है। इस रचना के केंद्र में किसान-वर्ग है। यह वर्ग महाजन के तंत्र से निकल नहीं पाया है । प्रेमचंद द्वारा सुझाया गया मार्ग परवर्ती भारतीय उपन्यासकारों को रास आया, यह रचना भी इसी कड़ी का हिस्सा है। महाजनी-समस्या ने सभ्यता का रूप ले लिया है। इसके चंगुल से 'जीवनसर' का जीवन संचालित हो रहा है। इसका प्रतिकार शिवनाथ करता है। यह उपन्यास ग्रामीण स्तर पर किसान के समक्ष विभिन्न संकटों को कथात्मक रूप में बहुत ही साफगोई से चित्रित करता है । किसान-जीवन की विभिन्न और बहुलतावादी छवियाँ इसमें अंकित हैं, अत: यह रचना विशिष्ट है। परम्परागत सभ्यता और संस्कृति का अगुवा किसान नई महाजनी सभ्यता के तले अपनी अंतिम लड़ाई लड़ रहा है । महाजनी के तंत्र को नफ़ीस तरीके से आधुनिक व्यवस्था ने अंगीकार किया है । इसकी कलई दोनों उपन्यासकारों ने खोली है । 'महाजनी महात्म्य' (1977) में जहाँ प्रतिरोध सफल और नई उम्मीद को पैदा करता है, वहीं 'अकाल में उत्सव' (2016) उपन्यास त्रासदी की स्थिति को दर्ज करता है। यह समय का

फेर है। इस दौर में सामाजिक आंदोलन तेज और तीव्र तो हुए हैं लेकिन इसको इस वस्तु-स्थिति तक लाने में वर्तमान व्यवस्था का शासनतंत्र ही भूमिका निभा रहा है। पंकज सुबीर ने इसे बहुत ही बारीकी और गहरी संवेदनशीलता के साथ अभिव्यक्त किया है। रामप्रसाद की आत्महत्या का वास्तविक जिम्मेदार यही शोषण का तंत्र है। जिसकी पहली कड़ी पटवारी और ग्रामसेवक है। दूसरी कड़ी में गिरदावर और साहूकार है। तीसरी कड़ी में जिलाधिकारी है। इनके बीच बैंकों का संजाल है जो कमीशनखोरी को बढ़ावा देता है । इसी में बेकसूर रामप्रसाद की हत्या का सीधे जिम्मेदार यही तंत्र है। इस तंत्र की फ़ितरत है कि कैसे अकाल में उत्सव मनाया जाये ? जिससे मार्च महीने से पूर्व अनुदान का बंदरबांट उचित हो सके। 'सूखा पानी' गाँव का सुर्खियों में होना विपक्ष की चाल ही नहीं, स्थापित-सत्तातंत्र के सहायक मीडिया की भूमिका से ही यह सब संभव हो पाया है। तत्कालीन मुख्यमंत्री का विधानसभा क्षेत्र होने के कारण भी इस तंत्र की दिलचस्पी सूखा पानी में है। गाँव और शहर के दो ध्रुवों को यहाँ एक साथ रचना में ढाला गया है। रामप्रसाद शक्तिहीन सिसकते भारत का प्रतीक है तो श्रीराम परिहार (जिलाधिकारी) शक्तिवान वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है। कुर्की का आदेश रामप्रसाद की जीवन लीला को लील लेता है। यह विडम्बना आधुनिक-तंत्र और सामयिक-यथार्थ की है जिसे उपन्यासकार ने बहुत ही मारक रूप में चित्रित किया है।

किसान-जीवन दोनों उपन्यासों के केंद्र में है। किसान-जीवन के विविध आयाम और बहुरंगी छवियाँ इन दोनों उपन्यासों का प्राणतत्व है। पारिवारिक जीवन के दायित्त्व और सामाजिक विसंगतियाँ इन दोनों उपन्यासों के दायरे को विस्तृत करती है। किसानी-जीवन की समग्रता, दोनों क्षेत्रों (राजस्थान और मध्यप्रदेश) की समानधर्मा है लेकिन रचनाकारों का दृष्टिकोण और प्रस्तुतीकरण भिन्न-भिन्न है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1) आधार-ग्रंथ:-

1. अन्नाराम सुदामा, महाजनी महात्म्य, साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली, प्र.वर्ष-2007
2. पंकज सुबीर, अकाल में उत्सव, शिवना प्रकाशन, सीहोर (म.प्र.), प्र.वर्ष-2016

2) सहायक-ग्रंथ:-

1. अशोक कुमार पांडेय, शोषण के अभ्यारण, शिल्पायन प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र.वर्ष-1996
2. किशन पटनायक, किसान आंदोलन : दशा और दिशा, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र.वर्ष-2006
3. घनश्याम शाह, भारत में सामाजिक आंदोलन, रावत प्रकाशन, जयपुर, प्र.वर्ष-2009
4. जगदीशचन्द्र , कभी न छोड़े खेत, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र.वर्ष-1976
5. डॉ. रामबक्ष, प्रेमचंद और भारतीय किसान, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, प्र.वर्ष-1984
6. डॉ. रामविलास शर्मा, प्रेमचंद और उसका युग, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र.वर्ष-2008
7. डॉ. सुधा ओम ढींगरा (संपादक), विमर्श-अकाल में उत्सव (स्थगित समय में फँसे जीवन का आख्यान), शिवना प्रकाशन, सीहोर, प्र,वर्ष- 2017
8. त्रिभुवन सिंह, उपन्यास शिल्प व प्रयोग, हिंदी प्रचारक संस्थान, वाराणसी, प्र.वर्ष-1973
9. नवल किशोर , भारतीय किसान और उनकी मूलभूत समस्याएं, कुरुक्षेत्र, प्र.वर्ष-2011
10. प्रेमचंद, गोदान, मनोज प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र.वर्ष-1936
11. प्रेमचंद, प्रेमचंद: कुछ विचार, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र.वर्ष-1943

12.बिपिन चन्द्र, भारत का स्वतंत्रता संघर्ष, हिंदी निदेशालय, नई दिल्ली, प्र.वर्ष-2010

13.महावीर प्रसाद द्विवेदी, सम्पतिशास्त्र, इंडियन प्रेस , प्रयाग, प्र.वर्ष-2007

14.मैनेजर पांडेय, भक्ति आंदोलन और सूर का काव्य, वाणी प्रकाशन, प्र.वर्ष-2001

15.राजेश जोशी, एक कवि की नोटबुक, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र.वर्ष-2004

16.रामाज्ञा शशिधर, किसान आंदोलन की साहित्यिक जमीन, अंतिका प्रकाशन, वाराणसी, प्र.वर्ष-2012

17.वीरेन्द्र जैन, डूब, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र.वर्ष-1991

18.शिवमूर्ति, आखिरी छलांग, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र.वर्ष-2009

19.संजीव, फाँस, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र.वर्ष-2015

3) कोश:-

1. धीरेन्द्र वर्मा, हिंदी साहित्य कोश, ज्ञानमंडल लिमिटेड, वाराणसी, प्र.वर्ष-2005
2. रामचंद्र वर्मा, मानक हिंदी कोश, राजकमल प्रकशन, नई दिल्ली, प्र.वर्ष-1973
3. श्यामसुन्दरदास बी.ए., हिंदी शब्दसागर-द्वितीय भाग, नागरी प्रचारणी सभा, बनारस, प्र.वर्ष-1920

4) पत्र-पत्रिकाएँ:-

1. अपनी माटी (किसान विशेषांक), अप्रैल-सितम्बर-2017
2. जनमत पत्रिका, नवंबर-2018
3. जनसत्ता अखबार, 15 फरवरी 2019
4. वागर्थ, मार्च 2019

5. हंस पत्रिका, अगस्त-2016

5) वेब-सामग्रीः-

1. https://www.sarita.in/social/the-life-of-a-farmer
2. https://vishwahindijan.blogspot.com/2017/02/blog-post_87.html
3. http://www.apnimaati.com/2017/11/blog-post_53.html
4. http://www.apnimaati.com/2017/11/blog-post_87.html

परिशिष्ट

प्रस्तावना

मानव सभ्यता की विकास-यात्रा में कृषि की शुरुआत एक अभूतपूर्व क्रांतिकारी परिघटना थी। कृषि-संस्कृति ने सामाजिक संबंधों को नया आयाम दिया। इस आयाम को पहली चुनौती उपनिवेशवाद के दौर में पूंजीवाद से प्राप्त हुई। पूंजीवाद का आधार कृषि-आधारित अर्थव्यवस्था को पद-स्थापित कर उद्योग आधारित व्यवस्था में तब्दील करना था। परम्परागत कृषि-आधारित व्यवस्था के केंद्र में सामंतवाद था जिसमें सामंत और किसान के परम्परागत सामाजिक व्यवहार जुड़े हुए थे। इस तंत्र में किसान जीवन को अभिव्यक्त करने का कार्य कवियों ने सर्वप्रथम किया, इसका एक छोर राजतंत्र से भी जुड़ा हुआ था जिसमें महाकाव्यों का सृजन हुआ। आधुनिक उपन्यासकारों ने आधुनिक-अर्थतंत्र के अनुकूल मध्यवर्ग और किसान को लेकर उपन्यासों की रचना की। हिंदी उपन्यासों में प्रेमचंद ने इस धारा को विकसित किया, जिसके केंद्र में किसान, स्त्री और दलित थे। इसी धारा को यथार्थ की भावभूमि के रूप में अन्नाराम सुदामा, संजीव, शिवमूर्ति, पंकज सुबीर आदि ने स्वतंत्रता के बाद अपनी-अपनी रचनाशीलता के स्तर पर अपनी-अपनी भाषाओं में समृद्ध किया। दुनिया में तीसरी लहर तकनीक आधारित ज्ञानतंत्र की चली। इसी ने किसान की बदहाली का इतिहास लिखा। यह तंत्र किसान की पहूँच से दूर भी है और नहीं भी। इसका कोहरा किसी भी चीज को स्पष्ट नहीं होने देता है।

आधुनिक काल में अनेक सामाजिक आंदोलन हुए हैं और हो रहे हैं, उनमें से किसान आंदोलन भी एक है। किसानों की समस्याओं को समग्रता से विवेचित और विश्लेषित करने का कार्य किसान-विमर्श का अभिन्न अंग है। दुनियाभर में किसान को लेकर अनेक तरह की बहसों ने जन्म लिया है। जिसमें से एक बहस यह भी है कि नये राजनीतिक-अर्थतंत्र के अनुकूलन में यह वर्ग समायोजित नहीं हो पा रहा है। नयी वैश्विक-व्यवस्था की प्रकृति और परिप्रेक्ष्य बदला हुआ है। दुनिया के सबसे बड़े उत्पादक-वर्ग किसान के लिए नई चुनौतियाँ गंभीर संकट की दस्तक है। भारत में ग्रामीण पत्रकारिता को

नया आयाम देने वाले पी. साईनाथ(द हिंदू, समाचार-पत्र) ने सर्वप्रथम किसानों की आत्महत्याओं को नये राजनीतिक-अर्थतंत्र के परिप्रेक्ष्य में देखने का अभिनव कार्य किया । इसका प्रभाव राजनीति, अर्थव्यवस्था, मीडिया और समाज पर पड़ा । समाज आंदोलित हुआ, राजनीति गर्मा गयी और किसान को लेकर वैश्विक स्तर पर नयी बहसों ने जन्म लिया ।

ग्रामीण-पृष्ठभूमि से जुड़े होने के कारण मैंने किसान केंद्रित साहित्य को अपने लघु-शोध प्रबंध का विषय बनाया । इस क्रम में 21 वीं शताब्दी में किसान केन्द्रित उपन्यासों की ओर मेरी दृष्टि गयी । हिंदी विभाग के वर्तमान विभागाध्यक्ष प्रो. सच्चिदानंद चतुर्वेदी जी और विभाग की शोध सलाहकार समिति ने मेरे द्वारा प्रस्तावित लघु-शोध प्रबंध के विषय को अनुमोदित किया । इसलिए मैं इसका विशेष आभार व्यक्त करता हूँ ।इस लघु-शोध विषय के चुनाव और अध्यायीकरण में मेरे शोध-निर्देशक डॉ. भीम सिंह जी का प्रत्यक्ष सहयोग रहा है । साथ ही शोध सलाहकार समिति के सदस्य डॉ. एम. श्यामराव जी ने विशेष सहयोग किया, अत: में इन दोनों का विशेष आभारी हूँ ।

इस लघु-शोध विषय का शीर्षक है-**' 'महाजनी महात्म्य' और 'अकाल में उत्सव' में अभिव्यक्त किसान-जीवन ।'** इस लघु-शोध विषय को अध्ययन की दृष्टि से तीन अध्यायों में विभाजित किया गया है, जिनके शीर्षक या नामकरण इस प्रकार से हैं-

प्रथम आध्याय है- **'समकालीन किसान-जीवन का परिदृश्य ।'** द्वितीय आध्याय है- **'महाजनी महात्म्य' और 'अकाल में उत्सव' में अभिव्यक्त किसान-जीवन ।'** तृतीय आध्याय है – **'विवेच्य उपन्यासों की भाषा-शैली ।'**इन अध्यायों को अनेक उपशीर्षकों में विभाजित किया गया है जिससे विषय का विवेचन और अध्ययन स्पष्टता से हो सके ।इस लघु-शोध विषय की आधार सामग्री तो साहित्यिक उपन्यासहैं लेकिन उसका विवेचन-विश्लेषण नये राजनीतिक-अर्थतंत्र के परिप्रेक्ष्य में किया

गया है । अत: इस शोध की पद्धति अन्तरानुशासनिक/ अंतरविद्यावर्ती है । शोध-उपागमों में आलोचनात्मक और ऐतिहासिक प्रविधि का व्यवहार किया गया है।

‘महाजनी महात्म्य’ और ‘अकाल में उत्सव’ में अभिव्यक्त किसान-जीवन

किसान शब्द आज के समय का सबसे जायदा डरावना और भयावह शब्द बनता जा रहा है जिस किसान को कभी अन्नदाता कहकर महिमामंडित किया जाता था आज वह व्यवस्था की भेंट चढ़कर उपेक्षा का शिकार हो गया है। किसान की बदहाली देश की बदहाली है। इस वस्तु-स्थिति को समझते हुए भी न समझने का ढोंग करती सरकारें भविष्य की भयावह स्थिति की ओर ले जा रही हैं। देश में नवउदारवादी नीतियों के बाद जहाँ एक तरफ उद्योगपति और पूंजीपति को फायदा पहुँचाया गया है वही, किसान के हालात बद-से-बदतर हुए हैं। सूखा, ओला और बाढ़ किसान के जन्मजात शत्रु हैं। किन्तु यदि ऐसी स्थिति में सरकारी महकमा मरहम लगाने के बजाय उनको उन्हीं की स्थिति पर छोड़ दे तो इससे बड़ी विडम्बना क्या हो सकती है ! सरकार की नीतियां उलटे किसान के गले की फ़ांस बनती जा रही है। किसानों की आत्महत्या और उनके मौत के आँकड़े भी स्वभाविक घटना ही जान पड़े तो हमें समझना चाहिए कि हम और हमारी सरकारें किस कदर किसान के प्रति संवेदनहीनता से गुजर रहे हैं।

राजस्थान की ग्रामीण पृष्ठभूमि पर लिखित अन्नाराम सुदामा का उपन्यास ‘महाजनी महात्म्य’ ग्रामीण किसानों के जन-जीवन का महाकाव्यात्मक चित्रण, सशक्त चरित्र-चित्रण और अपनी गहरी मानवीय संवेदना के नाते भारतीय कथा साहित्य में एक महत्वपूर्ण धरोधर है। इस उपन्यास में साहूकारों, सरपंच, पटवारी आदि द्वारा भोली-भाली ग्रामीण जनता के शोषण का जीवंत चित्रण किया गया है। धर्म के नाम पर मठाधीश किस तरह आम-जन की भावनाओं के साथ खेलते हैं। इसे भी इसमें भली-भांति उजागर किया गया है। राजनेताओं , महाजनों और सरकारी अधिकारियों की मिली-भगत से कैसे विकास योजनायें धरी-की-धरी

रह जाती हैं कैसे ये गाँव के लोगों को आपस में लड़ाकर अपना उल्लू सीधा करते हैं, इसका बड़ा ही यथार्थ वर्णन मिलता है। अंत में गाँव के लोग आपस में मिलकर, संगठित होकर इन दमनकारी शक्तियों का मुकाबला कर सकते हैं, इस ओर भी यह उपन्यास संकेत करता है। इस रचना के केंद्र में किसान-वर्ग है। यह वर्ग महाजन के तंत्र से निकल नहीं पाया है। महाजनी महात्म्य में पहेलीनुमा किसान और सरकार के बीच के संबंधों को दर्शाने के लिए कहा गया है कि- " एक मछली जैसे सारे तालाब को गंदा कर देती है, वैसे ही उस कुजीव पटवारी ने गाँव को ज़हरीला बना दिया है। सौ दिन चोर के, तो एक दिन साहूकार का भी, पटवारी की कल पूजा जमकर हुई, दो-चार दिन तो खटिया से क्या उठेगा"1

2016 में प्रकाशित पंकज सुबीर का उपन्यास 'अकाल में उत्सव' सरकारी-तंत्र का किसानों के प्रति उनकी सोच और मानसिकता का एक्सरे करता हुआ, हमारे मौजूदा समय की एक गंभीर समस्या से टकराता है। जहाँ हम आज भी कहते हुए नहीं अघाते हैं की भारत एक कृषि प्रधान देश है। जय जवान के साथ जय किसान का नारा बुलंद आवाजों में लगाया जाता है आज खुद सरकार उसी किसान की आवाज को घोंट रही है। उद्योग और बाजार ने खेती की उपेक्षा की है इसका शिकार होकर किसान आत्महत्या कर रहे हैं। घाटे का सौदा बनती हुई किसानी ने किसान की जिंदगी को बदरंग कर दिया है। पंकज सुबीर का उपन्यास पढ़ने के बाद यह महसूस होता है कि, किसान आपदा का मारा हुआ नहीं व्यवस्थाओं का मारा हुआ है। 'अकाल में उत्सव' नाम की व्यंजना से ही उपन्यास के कथ्य का पता चलता है, कि एक तरफ अकाल है तो दूसरी तरफ उत्सव है। एक तरफ मरण है तो दूसरी तरफ जश्न और आनंद है। एक और जन है तो दूसरी और तंत्र है। दरअसल यह उपन्यास व्यवस्था के दो ध्रुवों की कथा है। जिसके एक ध्रुव के प्रतिनिधि कलेक्टर श्रीराम परिहार है वही दूसरे ध्रुव के प्रतिनिधि किसान रामप्रसाद है। अपने छोटे कलेवर में यह उपन्यास प्रशासन और किसान के बृहद परिप्रेक्ष्य को रचता है। "सरकारी व्यवस्था शेर के शिकार करने समान होती है, जब शेर अपने

शिकार से पेट भर खा लेता है, तो बाकी का शिकार अपने से छोटे जानवरों के मतलब गीदड़ों आदि के लिए छोड़ देते हैं। ... कुल मिलाकर यह कि जब ऊपर वाले का पेट भर जायेगा, तब नीचे वाले का रास्ता खुलेगा।"2 किसानों को लेकर प्रशासनिक कर्मचारियों में भ्रष्टाचार की जड़ें इतनी गहराई तक पहुँच गयी है कि बिना सुविधा-शुल्क के कोई भी काम करने के लिए राजी नहीं हो रहे हैं, भले ही सरकार के द्वारा आम जनमानस के आर्थिक स्तर को मजबूत करने के उद्देश्य से कई महत्त्वपूर्ण योजनाएं चलाई जा रही है। रामप्रसाद इस वसूली और कुर्की के धोखाधड़ी में निरपराध आत्महत्या का शिकार बनता है। बैंकों की धांधली और रेवेन्यू विभाग की गलती से निर्दोष किसान आत्महत्या को विवश होता है। 'अकाल में उत्सव' सरकारी-तंत्र मनाता है और किसान को मुआवजा कागजों पर मिलता है।

आज भारत के किसान के समक्ष व्यापक चुनौतियाँ हैं। पहली वह जिस बीज पर इठलाता था, उसको बाजार की ताकतों ने अपने कब्जे में ले लिया। बीज महंगा, फसल सस्ती। दूसरा-रसायनिक खादों ने जमीन की उर्वरकता को बढ़ाने के साथ मिट्टी की गुणवत्ता में कमी ला दी है। उस का आधार ही हिल रहा है। स्वास्थ्य संबंधी चुनौतियाँ भी कीटनाशकों और रसायनिकों की वजह से है। तीसरा-किसान की फसल का थोक एवं समर्थित मूल्य में अंतर। चौथा सेज़ के नाम पर उसकी जमीन का अधिग्रहण। पांचवा-सरकार एवं कोरपोरेट का किसान विरोधी होना। यह कठिन डगर है किसान की। जहाँ हर स्तर पर मुश्किलें खड़ी की जा रही हैं। उसके अस्तित्व और अस्मिता पर गहराता संकट अधिक सघन हुआ है। अपेक्षा है उत्पादक श्रमिक और विचारशील मध्यवर्ग से जो इसकी लड़ाई में शामिल हो। इसको उचित नेतृत्व प्रदान करे। राजनीतिक नेतृत्व भी संवेदनशील होकर इस सामाजिक वर्ग के बारे में पूरी निष्ठा से जिम्मेदारी निभाये।

संदर्भ सूची-

1. अन्नाराम सुदामा, महाजनी महात्म्य, साहित्य अकादेमी, नई दिल्ली, प्र.वर्ष-2007, पृ.सं. 135
2. पंकज सुबीर, अकाल में उत्सव, शिवना प्रकाशन, सीहोर (म.प्र.), प्र.वर्ष-2016, पृ.सं. 15